निर्मला योग

द्विमासिक | वर्ष ४ अंक १६ | मई-जून १९८५

ॐ त्वमेव साक्षात्, श्री कल्की साक्षात्, श्री सहस्रार स्वामिनी,
मोक्ष प्रदायिनी, माता जी, श्री निर्मला देवी नमो नमः ॥

卐 जय श्री माता जी 卐

—मां निर्मला के प्रति

करता तम का नाश जो,
हे मां ! वही प्रकाश हो ।
हो जाते विलीन शब्द जिसमें,
तुम वही आकाश हो ॥१॥

विचारों का अंत करता,
तुम वही निर्विचार हो ।
विकारों का नाश करता जो,
तुम वही निर्विचार हो ॥२॥

हो निर्विकल्प, तुझमें हम
विकल्पहीन हो जाते हैं ।
निर्गुण निराकार हो जिसमें,
गुणाकार लीन हो जाते है ॥३॥

सत् चित् आनंद हो,
असत् के अन्त हो जाते हैं ।
मृत्यु का होता अंत जहां,
हर जीवन अनंत पावे हैं ॥४॥

हो जाते लुप्त सब सापेक्ष जिसमें,
वही तुम "परम" हो ।
सहज वक्ता, सहजद्रष्टा, सहजज्ञाता,
सहजयोग के मरम हो ॥५॥

काट देता भ्रमजाल जो,
वही सत्य साक्षात्कार हो ।
केवल तुम्हीं तुम हो सबमें,
सब आकारों के आकार हो ॥६॥

अज्ञानता का अंत करता,
वही परम ज्ञान हो ।
आत्म तत्व के ज्ञान तुम,
सब विज्ञानों के ज्ञान हो ॥७॥

क्षमा हो अपूर्व जिसमें,
अभिशाप धुल जाते हैं ।
हो पवित्रता, अनुपम,
सब पाप धुल जाते हैं ॥८॥

हे मां ! कामधेनु कल्पतरु हो,
जब जो चाहे मिल जाता है ।
निष्कलंक चंद्रमा, निस्ताप सूरज,
शीतल प्रकाश आता है ॥९॥

कैसे व्यक्त करें महिमा तेरी,
नेति नेति गाते वेद हैं ।
'निः' में निहित सर्वस्व,
किंचित कोई पाते भेद हैं ॥१०॥

पाकर दर्शन 'सहज' में तेरे,
हे मां ! कृतज्ञता से भर जाते हैं ।
जीवन धन्य हो जाता है,
भवसागर से तर जाते हैं ॥११॥

सी० एल० पटेल

सम्पादकीय

"साईं बिन दर्द करेजे होय"

—श्री कबीर

आत्म साक्षात्कार के पश्चात् कुण्डलिनी सहस्रार छेद कर बाहर चली जाती है। इसी समय आत्मा और परमात्मा का एकाकार होता है। यह परम आनन्द का समय है।

श्री कबीर दास जी कहते हैं कि यह स्थिति बराबर बनी रहनी चाहिए। जब कभी भी इस स्थिति में अभ्यान्तर होता है अर्थात् निर्विचारिता भंग होती है हृदय में दर्द का अनुभव होता है। क्योंकि निर्विचारिता के अभाव में आत्मा और परमात्मा का एकीकरण सम्भव नहीं है।

आज हम सभी सहजयोगीजन धन्य हैं कि परम परमेश्वरी आदिशक्ति श्री माता जी मानव रूप धारण कर यह स्थिति हमें सहज ही सुलभ करा रही हैं। हम सभी धन्य हैं और साथ ही आभारी भी।

सहजयोग के इस परम पुनीत सन्देश को जनमानस तक पहुंचाना हमारा कर्त्तव्य है।

निर्मला योग

४३, बंगलो रोड, दिल्ली-११०००७

संस्थापक : परमपूज्य माताजी श्री निर्मला देवी

सम्पादक मण्डल : डॉ शिव कुमार माथुर
श्री आनन्द स्वरूप मिश्र
श्री आर. डी. कुलकर्णी

प्रतिनिधि कनाडा : लोरी हायनेक
३१५१, होदर स्ट्रीट
वैन्कूवर, बी. सी.
वी ५ जैड ३ के २

यू.एस.ए. श्रीमती क्रिस्टाइन पैट्रूनीया
२७०, जे स्ट्रीट, १/सी
ब्रूकलिन, न्यूयार्क-११२०१

भारत श्री एम. बी. रत्नान्तवर
१३, मेरवान मैन्सन
गंजवाला लेन, बोरीवली
(पश्चिमी) बम्बई-४०००९२

यू.के. श्री गेविन ब्राउन
ब्राउन्स जियोलॉजिकल इन्फ़र्मेशन
सर्विस लि.,
१३४ ग्रेट पोर्टलैण्ड स्ट्रीट
लन्दन डब्लू. १ एन. ५ पी. एच.

इस अंक में ..... पृष्ठ

१. सम्पादकीय ... १
२. प्रतिनिधि ... २
३. माता-पिता का बच्चों के साथ तथा शिक्षकों का छात्रों के साथ सम्बन्ध ... ३
४. महाशिवरात्रि पूजा ... ७
५. निर्मल वाणी ... १५
६. प्रपंच और सहजयोग ... १६

श्री माता जी निर्मला देवी

माता-पिता का बच्चों के साथ तथा शिक्षकों का छात्रों के साथ सम्बन्ध

सहज मन्दिर, दिल्ली
१५ दिसम्बर, १९८३

सहजयोग क्या है और उसमें मनुष्य क्या-क्या पाता है, आप जान सकते हैं। लेकिन आज मैं आपको एक छोटी-सी बात बताने वाली हूँ कि माता-पिता का सम्बन्ध बच्चों के साथ कैसा होना चाहिये।

सबसे पहले बच्चों के साथ हमारे दो सम्बन्ध बन ही जाते हैं, जिसमें एक तो भावना होती है, और एक में कर्त्तव्य होता है। भावना और कर्त्तव्य दो अलग अलग चीज बनी रहती हैं। जैसे कि कोई मां है, बच्चा अगर कोई गलत काम करता है, गलत बातें सीखता है, तो भी अपनी भावना के कारण कहती है, "ठीक है, चलने दो। आजकल बच्चे ऐसे ही हैं, बच्चों से क्या कहना। जैसा भी है ठीक है।" दूसरी मां होती है कि वो सोचती है कि वो बच्चों को कर्त्तव्य-परायण बनाए। कर्त्तव्य-परायण बनाने के लिये वो फिर बच्चों से कहती है कि "सवेरे जल्दी उठना चाहिये आपको। पढ़ने बैठना चाहिये। फिर आप जल्दी से स्कूल जाइये। ये समय से करना चाहिये। वहां बैठना चाहिये, यहां उठना चाहिये, ऐसे कपड़े पहनना चाहिये।" इन सब चीजों के पीछे में लगी रहती है।

अब इसे कहना चाहिये कि ये सम्यक नहीं है, integrated (सम्यक) बात नहीं है। इसमें integration (समग्रता) नहीं है। और आज का सहजयोग जो है वह integration (समग्रता) है। दोनों चीजों का integration (विलय, एकीकरण, समग्रीकरण) होना चाहिये न कि combination (एकत्रीकरण) होना चाहिये। Integration (विलय, एकीकरण, समग्रीकरण) और combination (एकत्रीकरण) में ये फर्क हो जाता है कि हमारी जो भावना है वो कर्त्तव्य होनी चाहिये, और कर्त्तव्य हमारी भावना होनी चाहिये।

जैसे कि हमें अपने बच्चे के प्रति प्रेम है। तो हम कहेंगे कि प्रेम है, इसीलिये हमारा कर्त्तव्य है—हमारा बच्चा है, ठीक रास्ते पर चले और हमारा बच्चा ठीक रास्ते पर इसलिये चले, क्योंकि हमें उससे प्रेम है। अगर हम अपने बच्चे को ये नहीं बताते कि वो ठीक रास्ते पर चले, तो इसका मतलब है हम भावना-प्रधान हैं। ये तो बहुत आसान है कि हम इस चीज़ को सोचें कि "हम बच्चों से क्या कहें? जाने दीजिये। बच्चे से कहने में बच्चे दुःखी हो जाते हैं, तकलीफ होती है उनको। उनको क्यों दुःखी करें?"

और एक होता है ये सोचा जाए कि "नहीं, कितना भी दुःख हो तो भी बच्चों को जो

है एकदम धो करके, माँज करके, बिलकुल साफ कर दें।"

जब integration (समग्रीकरण) हो जाता है तब मनुष्य इस तरह से अपना ही बर्ताव कर लेता है कि जिसका सबसे बड़ा प्रभाव बच्चों पर पड़ता है।

जैसे पिताजी तो हैं आलसी नम्बर एक, समझ लीजिये, और या तो शराब पीते हैं, सिगरेट पीते हैं। या माँ बहुत गुस्सैली है, बच्चों को मारती, पीटती, झिड़कती रहती है। तो उसका असर बच्चों पर अपने आप पड़ जाता है। ऊपर से आप उन्हें कितने भी सदुपदेश दें, कितनी भी बातें बताएं, वो ये देखते हैं कि ये लोग कैसे हैं।

बताने से कुछ नहीं होने वाला। जो फ़र्क होता है वो देखने से होता है कि हमारे मां-बाप का बर्ताव कैसा है। उनका दूसरों के साथ बर्ताव कैसा है और उनका हमारे साथ बर्ताव कैसा है। उनका आपस में बर्ताव कैसा है। बच्चे हमेशा ये चीज देखते रहते हैं।

एक छोटा सा किस्सा है कि एक औरत बहुत दुष्ट स्वभाव की थी। और ससुर बुड्ढे हो गए थे। तो उनको वो दूध वगैरह देती थी तो एक बड़ा गंदा सा बर्तन था मिट्टी का, उसमें दिया करती थी। और वो बिचारे उसी में दूध पीते थे। और वो बच्चा जो था उनका, वो ले जा करके दूध अपने दादा को देता था। एक दिन वो बर्तन टूट गया। तो बच्चा जोर-जोर से रोने लगा। तो उन्होंने कहा "इसमें रोने की कौन सी बात है? वो तो टूट गया, सो टूट गया। इसमें रोने की कौन सी बात है?" तो बच्चे ने कहा कि "मैं ये सोच रहा था मां, कि जब तुम बुड्ढी होओगी, तो मैं तुम को किस चीज में दूध दूंगा?" तब उसका दिमाग जगा कि देखो बच्चे ने बात समझ ली, और फिर कहा कि "अच्छा अगर दूसरा आ सकता है तो बहुत अच्छी बात है। अब मैं नहीं रोऊंगा, क्योंकि उसमें मैं तुमको दूध दूंगा।"

तो बच्चे हमेशा ये देखते रहते हैं कि आपका बर्ताव कैसा है। और इसकी जो छाप बच्चे पर पड़ती है बड़ी गहरी होती है, बनिस्बत इसके कि आप सुबह-शाम बच्चे को लेक्चर देते रहें।

इसलिये जो लोग सहजयोगी यहां पर हैं, या जिनके बच्चे यहां पर पढ़ते हैं, उनको समझ लेना चाहिये कि क्या आप में वो सम्यक (integrated) ज्ञान आया है कि नहीं। सम्यक ज्ञान आने पर मनुष्य कितना भी समझाए तो बुरा नहीं लगेगा, कितना भी प्रेम करे तो भी खराब नहीं होगा।

आप लोगों पर मेरा अनंत प्रेम है, और बहुत बार आपको मैं समझाती भी हूं, लेकिन न आप लोग बुरा मानते हैं, न ही आप बिगड़ गए हैं। इसकी वजह ये है कि सम्यक ज्ञान से काम करना है। अगर बच्चे जानते हैं कि आप पूरी तरह से उनको प्यार करते हैं तो एक बार की भी झिड़की बहुत होती है। लेकिन अगर आप हर समय झिड़कते रहें तो बच्चे कहेंगे कि इनकी तो आदत ही झिड़कने की है। इसलिये बच्चों को बहुत ही संभाल कर और प्यार से रखना चाहिये।

वास्तव में मैं तो यही कहूँगी कि प्यार ही से रखिये। और जब कभी भी बच्चे में कोई दोष देखें, कुछ देखें, दो-चार बार देखने के बाद शांति से उनको बिठा करके कहें कि ये ठीक नहीं है। आपको आश्चर्य होगा कि आपका उनके साथ अगर सद्व्यवहार रहा, तो इस घबड़ाहट में, कि कहीं इनका प्यार न खत्म हो जाए, एकदम ठीक हो जाएंगे। लेकिन आपने अगर कोई प्यार ही कभी बच्चे को जताया नहीं, हर समय "ये ठीक से रखो, वो ठीक से रखो, इसे ये करो, वो करो," करते रहे, तो

बच्चे ये सोचेंगे कि यह तो इनकी आदत है, एक बात और कह दी तो क्या कर ली। अतः अपना व्यवहार सम्यक होना चाहिये।

अपने देश में भी हमने देखे हैं कि लोग अपने बच्चों के लिये झूठ बोलेंगे, चोरी करेंगे, चकारी करेंगे, ये करेंगे, वो करेंगे। यहाँ तक कि उनका बस चले तो देश भी बेच डालें। और कुछ लोग होते हैं, परदेश में खास करके, वो अपने बच्चों की इतनी भी परवाह नहीं करते हैं कि अगर बच्चे मर रहे हों तो उनके मुंह में पानी डाल दें। ये दोनों चीजें सम्यक नहीं हैं। उनको यही रहता है कि हमारा carpet (कालीन) गन्दा नहीं होना चाहिये, हमारा door (दरवाजा) साफ़ रहना चाहिये और हमारी गाड़ी ठीक रहनी चाहिये और बच्चों को काम करना चाहिये। उनके पीछे में पड़े रहते हैं। और यहाँ हम बच्चों को खराब करते हैं। खासकर माँ बच्चों को बहुत खराब करती हैं। पिता भी कभी-कभी बच्चों को खराब करते हैं।

तो पहले अपनी ओर देखना चाहिये कि हम बच्चों को क्यों खराब करते हैं? इस कदर उनको प्यार नहीं देना चाहिये कि जिससे बच्चे खराब हो जाएं, आप की बात न सुनें, मनमानी करें, या बच्चे ये न सोचें कि, "हाँ ये तो...हम, इनको सब समझा लेंगे। ये तो अपने हाथ की बात है।" इस कदर हम अपने अति-प्यार से उनको गलत रास्ते पर डाल देते हैं।

उसी प्रकार कभी कभी उनके साथ बहुत सख्ती करने से भी उनको हम इस तरह के बना देते हैं कि वो हमसे मुंह मोड़ लेते हैं। फिर हमारा वो मुंह नहीं देखना चाहते।

दोनों चीज़ के बीचों-बीच सहजयोग है, सुषुम्ना नाड़ी पर। अतः सुषुम्ना नाड़ी पर चलना चाहिये। न तो अति-प्यार के बहाव में रहना चाहिते, और न ही अति-कर्त्तव्य के बहाव में, किन्तु आत्मा के बहाव में चलना चाहिये। और जब आप आत्मा के आदेश से चलेंगे तो आपको आश्चर्य होगा कि आपकी आत्मोन्नति तो होगी ही, साथ में आपके देखा-देखी आपके बच्चों की भी होगी।

ये सहजयोग का स्कूल इसलिये नहीं बनाया गया है कि देश में स्कूल कम हैं। स्कूल तो बहुत लोग बनाएंगे, बना भी सकते हैं, पैसा भी बना सकते हैं, बच्चे पढ़ भी जाएंगे, graduates (स्नातक) भी हो जाएंगे, और सब हो जाएगा।

सहजयोग का स्कूल बनाने का मेरा विचार सिर्फ एक ही बात से था कि हमारे देश में आज ऐसे नागरिकों की जरूरत है जो एक विशेष रूप के आदर्शवादी हों। और ये विशेष रूप के आदर्शवादी बच्चे कहाँ तैयार होंगे? उनके लिये कोई ऐसी शाला होनी चाहिये जहाँ इसकी पूरी व्यवस्था हो।

उसी प्रकार teachers (अध्यापकों) का भी हाल है। अगर teachers (अध्यापक) चिड़चिड़े हों, हर समय "ये खराब, वो खराब" इस तरह की बेकार की बातों में दिमाग लगाते होंगे, तो बच्चे भी वैसे हो जाएंगे, materialistic (भौतिकतावादी)। या तो teacher (अध्यापक) भी over-indulgent, माने बच्चों को बहुत प्यार दुलार में, उनको पढ़ाई-लिखाई न दें, तो बच्चे भी वैसे हो जाएं। इसलिये teachers (अध्यापकों) पर भी बड़ा उत्तर-दायित्व है कि वो अपने जीवन को इस तरह से सुधारें कि बच्चों के सामने एक बड़ा भारी आदर्श खड़ा हो जाए, जो लोग याद करें कि "हमारे एक teacher (अध्यापक) थे, उनकी एक विशेषता ये थी। उनकी एक विशेषता थी।"

तो ये काम बहुत पहुँचे हुए लोगों का है। पहले गुरू जो होता था realised soul (साक्षात्कारी) होता था और बहुत पहुँचा हुआ होता था। इसी-

लिये अब आपका गोत्र जो है, आपकी university (विश्वविद्यालय) सहजयोग है। और सहजयोग की योग्यता के ही हमारे teachers (अध्यापक) होने चाहिये, और वहाँ के बच्चे होने चाहिये। 'एक आदर्शवादी' उत्तम, अतिउत्तम विद्यार्थी इस स्कूल से निकलेंगे।

इसका मतलब ये नहीं कि वो बड़े रईस बन करके और बड़े कहीं वो बनकर घूमेंगे। लेकिन ऐसे होंगे कि इस संसार का आधार हों, जैसे कि श्री गणेश आधार हैं। इसी प्रकार हमें अनेक आधार खड़े करने हैं। इसीलिये हम सहजयोग की व्यवस्था में ही एक स्कूल चलाने के पीछे लगे हुए हैं। और इसी प्रकार एक बड़ा स्कूल भी बम्बई में बनने वाला है। उसका भी श्री गणेश हो गया है, उसका भी foundation stone (नींव) पड़ गया है।

और आशा है आप लोग सब अपने दिल को पूरी तरह से साफ करके और इस ओर बढ़ें कि हम अपने बच्चों को एक विशेष रूप के आदर्शवादी विद्यार्थी बनाएंगे। और 'सब' मिल करके काम करेंगे। बच्चों में झगड़ा और उनमें जो उत्पात करने की बातें हैं, उसको किस तरह से निकाल देना चाहिये, और उसका कैसा किसी तरह से पूरी तरह से नाश कर देना चाहिये, ये सब कुछ मैं चाहती हूँ कि parents (अभिभावकों) को भी सिखाया जाए।

लेकिन इसकी गतिविधियों का जब अच्छे से सब काम शुरू हो जाएगा, तब आप देखियेगा, parents (अभिभावकों) में भी बहुत बदलाव आ जाएगा, और बच्चे भी बदलेंगे। इसी तरह से सारा संसार बदल सकता है। और तो कोई मुझे मार्ग दिखाई नहीं देता।

इसलिये आप समझ लें कि आपका भी बड़ा महत्व है, और उस महत्व को अपने नजर में रखते हुए आप सब लोग उस ओर बढ़ें, और इस स्कूल को बहुत यशस्वी करें। यह होगा।

मैं इस तरह का आप सबको आशीर्वाद देती हूँ।

With best compliments from

A WELL WISHER

महाशिवरात्रि पूजा*

पंढरपुर
२६ फरवरी १९८५

इस आधुनिक युग में, एक स्थान जो कि पवित्र होना चाहिए, अत्यधिक अपवित्र हो जाता है। इन दिनों ऐसी अव्यवस्थित दशा है, और जबकि हम एक अत्यन्त महत्वपूर्ण चीज स्थापित करने की कोशिश में हैं। जैसा कि एक छोटे अंकुर को पत्थरों में से बाहर आने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसके लिए हमें अपने अपने मस्तिष्क को तन्दरुस्त रखना होगा और हरेक चीज की ओर सही दृष्टिकोण रखना होगा। यह देखने का प्रयास करना होगा कि हम अपने धैर्य व बुद्धिमत्ता से क्या क्या प्राप्त कर सकते हैं। यह बहुत ही महत्वपूर्ण है।

मेरे विचार से हम सब लोगों के लिए आज का दिन बहुत महान है क्योंकि यह श्री विट्ठल जी—विराट—का स्थान है। यह वही जगह है जहाँ श्री विट्ठल अपने एक भक्त पुत्र के सामने प्रगट हुए थे और जब उस (भक्त) ने उनको कहा "अच्छा होगा आप एक ईंट पर खड़े रहें।" वहाँ वे खड़े रहे। कहते हैं कि वे खड़े इंतजार करते रहे। यहमूर्त्ति जिसे हम देख रहे हैं, कुछ लोग कहते हैं कि यह मूर्त्ति पृथ्वी माता (के गर्भ) से उत्पन्न हुई इसी रेत पर। इसको ले जाते हुए पुण्डरीकाक्ष ने कहा था "ये वही (विट्ठल जी) हैं जो मुझे व मेरे माता-पिता को देखने के लिए आए थे। जब मैं (अपने माता-पिता की सेवा में) व्यस्त था। वे उसी ईंट पर, जिसे मैंने फेंका था, खड़े रहे।"

अब इस सम्पूर्ण कथानक को एक बहुत ही युक्तिपूर्ण ढंग से देखना चाहिए। ईश्वर स्वयं हर तरह का चमत्कार करने में सक्षम है। हम लोग भी जो ईश्वर द्वारा उत्पन्न किए गए हैं कुछ ऐसे कार्य करते हैं जो चमत्कारपूर्ण लगते हैं। अगर हम १०० वर्ष पूर्व की संसार की दशा को देखें तो हमें बहुत सी चीजें ऐसी मिलेंगी जो चमत्कारपूर्ण होंगी। एक सौ वर्ष पूर्व कोई ऐसा नहीं सोच सकता था कि (आज) हम इतने सुदूर इस स्थान पर ये सब प्रबन्ध कर पायेंगे। लेकिन यह सभी चमत्कार परमात्मा की शक्ति से उत्पन्न होते हैं। इस चमत्कार के बहुत ही सूक्ष्मतम अंश के हम भी भागी बन जाते हैं। परमात्मा के चमत्कारों की व्याख्या नहीं की जा सकती और न ही करनी चाहिए। वह हमारे मस्तिष्क से परे है। मनुष्य को भगवान के अस्तित्व का आभास कराने के लिए परमात्मा कुछ भी कर सकता है।

वह (परमात्मा) तीनों आयाम में विचर सकता है और चौथे आयाम में भी। वह जो कुछ चाहे सब कर सकता है। इसको आप अपनी दिनचर्या में देख चुके हैं कि कितने चमत्कार होते रहते हैं। यह कैसे

*'निर्मला योग' (अंग्रेजी) मई-जून १९८४ के पृष्ठ ६-१२ का हिन्दी अनुवाद।

होता है ? इसको आप नहीं समझ सकते। वह उन वस्तुओं में भी कार्य करता है जो निर्जीव हैं। लोग चकित रह जाते हैं कि यह सब कैसे होता है। अतः यह सब देखकर हमें स्वयं विश्वास करना चाहिए कि वह (ईश्वर) है और वह जो चाहे सब कुछ कर सकता है। हम उसके सामने कुछ भी नहीं हैं। इसके विषय में यानि ईश्वर के चमत्कार के बारे में कोई तर्क नहीं होना चाहिए। "यह कैसे होता है ? यह कैसे हो सकता है ?" आप इसको समझ नहीं सकते। इसे (आप तभी समझ सकते हैं) जब आप मस्तिष्क की उस अवस्था को प्राप्त कर चुके हों जब आप अपनी अनुभूति द्वारा विश्वास करें कि ईश्वर सर्वशक्तिमान है। ऐसी धारणा होनी अत्यन्त दुष्कर है। यह बहुत कठिन है क्योंकि हम सीमित व्यक्ति हैं। हम लोगों की शक्ति सीमित है। हम यह अनुमान नहीं लगा सकते कि ईश्वर इतना सर्व-शक्तिमान कैसे है ? क्योंकि हमारे पास (इसके लिए) क्षमता नहीं है। यह परमात्मा जो हम लोगों का निर्माता है, हमारा रक्षक है, जिसकी यह इच्छा है कि हमारा अस्तित्व बना रहे, जो स्वयं ही हमारा अस्तित्व है वह सर्व शक्तिमान ईश्वर ही है। सर्वशक्तिमान। वह जो कुछ भी चाहे आपके साथ कर सकता है। वह दूसरे विश्व की संरचना कर सकता है तथा इस संसार का विनाश भी कर सकता है। ऐसा तभी होता है जब उसकी ऐसी इच्छा हो।

'शिव पूजा' के लिए पण्ढरपुर आने का मेरा विचार इसलिए हुआ कि 'शिव' आत्मा का प्रतिनिधित्व (represent) करता है तथा 'आत्मा' आप सभी के हृदय में निवास करती है। 'सदाशिव' का स्थान आपके सिर के ऊपर है किन्तु वह आपके हृदय में प्रतिबिम्बित है। आपका मस्तिष्क ही 'विट्ठल' है। अतः 'आत्मा' को आपके मस्तिस्क में लाने का अर्थ होगा आप के मस्तिष्क को आलोकित करना। आपके मस्तिष्क आलोकित होने का अर्थ है आप के सीमित क्षमता वाले मस्तिष्क की क्षमता असीमित होना, परमात्मा की अनुभूति के लिए। मैं इसके लिए 'समझना' शब्द प्रयोग नहीं करूंगी। वह कितना शक्तिशाली है, वह कितना चमत्कारी है, कितना महान है। (आत्मा के मस्तिष्क में आने का) दूसरा अर्थ है, मानव मस्तिष्क निर्जीव वस्तु सृजन कर सकता है। परन्तु जब आत्मा मस्तिष्क में आ जाती है तब आप सजीव वस्तुएं उत्पन्न करने लगते हैं, कुण्डलिनी का सजीव कार्य। यहाँ तक कि निर्जीव भी सजीव की भाँति व्यवहार करने लगता है क्योंकि आप निर्जीव में उनकी आत्मा को स्पर्श कर देते हैं।

जिस प्रकार प्रत्येक अणु या परमाणु के अंदर न्यूक्लियस में उस परमाणु की 'आत्मा' रहती है। अगर आप आत्मा हो जाएं (यदि आप अपनी तुलना एक परमाणु से करें), तो यह इसी प्रकार होगा जैसे कि परमाणु का मस्तिष्क न्यूक्लियस हो और इस मस्तिष्क (अर्थात न्यूक्लियस) का नियंत्रण, इस न्यूक्लियस में स्थित आत्मा करे। इस प्रकार आपके पास चित्त यानि शरीर है 'अणु' का पूरा शरीर), व तब न्यूक्लियस और उस न्यूक्लियस के अंदर 'आत्मा' है।

इसी प्रकार हमारा शरीर है—हमारा चित्त। और उसके बाद हमारे पास न्यूक्लियस है यानि मस्तिष्क, तथा 'आत्मा' हृदय में है। मस्तिष्क का संचालन 'आत्मा' के द्वारा होता है। यह कैसे ? इस प्रकार, हृदय के चारों ओर सात 'औरा' (Auras)—तेज मंडल—हैं (जिसको कितने ही गुणा बढ़ा सकते हैं। 7^{16000} (7 raised to power 16,000, ७ पर १६,००० की शक्ति)। 'औरा' (Auras) सातों चक्रों की निगरानी करते हैं।

यह आत्मा इन 'औरा' (Auras) के द्वारा देखती रहती है। देखती रहती है—मैं पुनः कह रही हूँ—आत्मा इन 'औरा' (Auras) के द्वारा देखती रहती है। ये 'औरा' (Auras) मस्तिष्क में

स्थित सातों चक्रों के व्यवहार पर निगरानी रखते हैं। ये मस्तिष्क में कार्यरत सभी नसों (Nerves) की भी निगरानी करते हैं। 'देखते' रहते हैं। लेकिन जब आप आत्मा को अपने मस्तिष्क में लाते हैं तब आप दो कदम आगे बढ़ जाते हैं। क्योंकि जब आपकी कुण्डलिनी ऊपर उठती है तो वह सदाशिव को स्पर्श करती है और सदाशिव आत्मा को सूचित करते हैं। यहां सूचित करने का मतलब है प्रतिबिम्बित होते हैं आत्मा में। अतः वह 'पहली' अवस्था है—जहां चौकसी करते हुए 'औरा' मस्तिष्क के विभिन्न चक्रों से संचार स्थापित करना शुरू कर देते हैं व एकवद्ध या सम्यक (Integration) करते हैं।

लेकिन जब आप आत्मा को अपने मस्तिष्क में लाते हैं यह 'दूसरी' अवस्था है। वस्तुतः तब आप पूर्णरूप से 'आत्म साक्षात्कार' पाते हैं, पूर्ण रूप से। क्योंकि तब आपका 'स्व', जो कि आत्मा है, आपका मस्तिष्क बन जाता है। यह क्रिया अति गतिशील होती है। यह मनुष्य के अंदर 'पांचवां' आयाम (dimension) खोलती है। पहले जब आप साक्षात्कार पाते हैं व सामूहिक चेतना में आते हैं तथा आप कुण्डलिनी को ऊपर उठाने लगते हैं, तब आप 'चौथे' आयाम को पार कर जाते हैं। परन्तु जब आप की आत्मा मस्तिष्क में आ जाती है, तब आप 'पांचवां' आयाम बन जाते हैं। तात्पर्य यह कि आप 'कर्त्ता' (Doer) बन जाते हैं। उदाहरण के लिए मान लो मस्तिष्क कहता है "इस वस्तु को ऊपर उठाओ", आप इसको अपना हाथ लगाते हैं व उसको ऊपर उठा लेते हैं। अतः आप 'कर्त्ता' हुए। परन्तु जब मस्तिष्क आत्मा बन जाता है, तब आत्मा 'कर्त्ता' हो जाती है और जब आत्मा 'कर्त्ता' है तब आप पूर्णतया 'शिव' हो जाते हैं—'आत्म-साक्षात्कारी' (Self realised)। उस अवस्था में यदि आप नाराज हों तो भी आपको मोह (attachment) नहीं होता। आपका किसी भी चीज से मोह नहीं होता। यदि आप के पास कुछ है, आपको उससे कोई मोह नहीं रहता। आप मोह ग्रस्त नहीं होते क्योंकि आत्मा निर्लिप्त (detached) है। पूर्णरूप से निर्लिप्त। जो कुछ भी हो आप किसी तरह के लगाव की चिन्ता नहीं करते। एक क्षण के लिए भी आप का लगाव नहीं होता।

मैं तो कहूंगी कि अपनी आत्मा की निर्लिप्तता (detachment) को समझने के लिए हमें अपने आपको अच्छी तरह से अध्ययन करना चाहिए स्पष्ट रूप से कि कैसे हम लोग मोह में फंसे हुए हैं? सबसे पहले हम लोगों का मोह मस्तिष्क के द्वारा है, अधिकांशतः मस्तिष्क से। क्योंकि हमारे सभी संस्कार (conditioning) हमारे दिमाग में भरे पड़े हैं और हम लोगों का अहम् भी मस्तिष्क में है। अतः भावात्मक मोह भी हमारे मस्तिष्क द्वारा होता है और हमारे संस्कार (conditionings) मस्तिष्क में है और हमारा सब अहंकारी मोह भी मस्तिष्क द्वारा होता है। जिसके कारण भावात्मक लगाव मस्तिष्क के द्वारा होता है तथा हमारे अहंकारमय लगाव भी मस्तिष्क के द्वारा होते हैं। इसीलिये यह कहा गया है कि साक्षात्कार के पश्चात् अलिप्त-भाव (detachment) के अभ्यास द्वारा 'शिवतत्व' का अभ्यास करना चाहिए।

अब आप अलिप्त-भाव (detachment) का अभ्यास कैसे करें?

चूंकि किसी भी वस्तु से हमारा लगाव मस्तिष्क के जरिए होता है—परन्तु यह हमारे चित्त (ध्यान) द्वारा होता है। अतः इसके लिए हमें अपना चित्त (ध्यान) नियंत्रित करना चाहिए जिसको हम "चित्तनिरोध" कहते हैं। "यह (चित्त) कहां जा रहा है?" सहजयोग के अभ्यास में यदि आपको ऊपर उठना है तो आपको अपने 'यंत्र' (Instrument) को सुधारना होगा—दूसरे के यंत्र को नहीं। इस बात को आपको निश्चित रूप से जानना चाहिए।

अब आप अपने चित्त की केवल निगरानी करें —यह कहाँ जा रहा है ? आप स्वयं की निगरानी करें। जैसे ही आप अपने को, अपने ध्यान को देखना शुरू करेंगेआप अपनी आत्मा से एकरूप हो जाएंगे। चूंकि यदि आप को अपने 'ध्यान' की निगरानी करनी है, तो आप को अपनी आत्मा बनना पड़ेगा। अन्यथा आप इसकी निगरानी कैसे करेंगे ?

अब आप देखें आपका ध्यान किधर जा रहा है ? सबसे पहले आपका लगाव मोटे तौर पर शरीर से है। आप देखिए ! "शिव" अपने शरीर से लगाव को नहीं जानता। वह कहीं भी सो लेते हैं। वह कब्रिस्तान में जाते हैं और वहीं सो जाते हैं। क्योंकि वह लिप्त नहीं हैं। वह किसी भूत या किसी अन्य चीज द्वारा पकड़े नहीं जा सकते। वह विलग (detached) है। इस विलगाव (detachment) की निगरानी करनी चाहिए व उसे अपने लगावों के जरिए देखना चाहिए।

आप लोग साक्षात्कार प्राप्त जीवात्माएं (realised souls) हैं परन्तु अभी शुद्ध आत्मा (spirit) नहीं (बने हैं)। क्योंकि वास्तव में अभी वह आत्मा (spirit) आप के मस्तिष्क में नहीं आयी है। फिर भी आप साक्षात्कारी जीवात्मा (realised souls) हैं। अतः आप कम से कम अपने ध्यान (चित्त) को निगरानी कर सकते हैं। आप यह कर सकते हैं। आप अपने ध्यान (चित्त) की निगरानी स्पष्ट रूप से कर सकते हैं। और तब अपने 'ध्यान' को नियंत्रित भी कर सकते हैं। यह बहुत आसान है। अपने 'ध्यान' को नियंत्रित करने के लिए—इसे केवल इस वस्तु पर से उस अन्य वस्तु पर लगाएं। अपनी प्राथमिकताओं (priorities) में परिवर्तन लाए। यह सब कुछ करना होगा, अभी। साक्षात्कार के पश्चात् पूर्ण निर्लिप्ति-भाव।

शरीर आराम मांगता है। आपका चित्त कहां जा रहा है यह सतत देखते रहने से इसे थोड़ा कष्ट दीजिये। आपको जो आराम दायक प्रतीत होता है उसको थोड़ा कष्टप्रद बनाइये। इसी वजह से लोग हिमालय पर गये। देखिए ! इस स्थान पर आने में ही हम लोगों को कितनी बाधाओं का सामना करना पड़ा। अतः हिमालय पर पहुँचने में तो आप कल्पना कर सकते हैं ? साक्षात्कार के पश्चात् (लोग) अपने शरीर को हिमालय पर ले जाया करते थे। (वे शरीर से कहते थे) "अच्छा, अब ये सब सहन करो। देखें, अब आप इसमें कैसे उतरते हैं ?" जिसे आप तप कहते हैं उसकी अब (आत्मसाक्षात्कार के बाद) शुरुआत होती है। एक तरह से यह एक तपस्या है, जिसको आप बहुत ही आसानी से सहन कर सकते हैं। क्योंकि अब आप साक्षात्कार पाए हुए जीवात्मा (realized souls) हैं। यह सब आनन्द-मग्न स्थिति में इस शरीर को इस योग्य बनाएं। शिवजी के लिये कोई फर्क नहीं कि वे कब्रिस्तान में रहें या अपने कैलाश पर या कहीं भी।

आपका ध्यान कहाँ है ? आप देखें। मनुष्य का चित्त बहुत ही खराब होता है। बहुत ही उलझा हुआ, निरर्थक। मस्तिष्क की इस उलझी स्थिति के लिये स्पष्टीकरण दिया जाता है "हमने यह इस लिये किया" या दूसरों को स्पष्टीकरण देना पड़ता है। स्पष्टीकरण की कोई जरूरत नहीं, न देना चाहिए, न स्वीकार करना चाहिए और न माँगना चाहिए। कोई स्पष्टीकरण नहीं। बिना किसी स्पष्टीकरण के रहना उत्तम है। सरल हिंदी में कहा है—जैसे राखहु, तैसे ही रहूँ। अर्थात् जिस तरह भी आप मुझे रखें, मैं उसी दशा में रहूँगा, और मैं आनन्द उठाऊंगा। कबीर दास इसके आगे कहते हैं, "यदि आप मुझे हाथी यानि राजसी सवारी पर जाने को कहें, मैं जाऊंगा। यदि आप पैदल जाने को कहें, मैं पैदल जाऊंगा।" जैसे राखहुँ, तैसे ही रहूँ। अतः इस विषय में कोई प्रतिक्रिया नहीं (होनी चाहिए), कोई प्रतिक्रिया नहीं। किसी

तरह की सफाई नहीं, कोई प्रतिक्रिया नहीं (होनी चाहिए)।

अब दूसरी बात भोजन के विषय में है। पशुओं की तरह मनुष्य की यह सबसे पहली जरूरत है। भोजन पर किसी तरह का ध्यान नहीं। चाहे नमक हो या नहीं, चाहे यह है या वह, भोजन पर कोई ध्यान नहीं। वास्तव में यह याद नहीं रखना चाहिए कि सुबह आपने क्या खाया है ?लेकिन हम इस विषय में सोचते रहते हैं, हम कल क्या खाने जा रहे हैं ? हम भोजन का उपभोग इस शरीर को चलाने के लिए नहीं करते, परन्तु इस जिह्वा (जीभ) के आनंद की अत्यधिक संतुष्टि के लिए। आप जब यह एक बार समझ लेंगे कि (स्वाद से प्राप्त) आनन्द एक स्थूल ध्यान का प्रतीक है। किसी भी प्रकार का ऐसा आनंद अति स्थूल होता है, सनसनीदार व उत्तेजक होता है। यह बहुत ही स्थूल है।

लेकिन जब मैं कहती हूँ "कोई आमोद-प्रमोद नहीं" इसका यह तात्पर्य नहीं कि आप एक गम्भीर व्यक्ति बन जाएं या ऐसे जैसे कि परिवार में कोई मर गया हो। आपको शिव की तरह होना चाहिए —बिल्कुल अलिप्त।

वह (शिवजी) शादी के लिए एक ऐसे बैल पर सवार होकर आए जो बहुत तेज दौड़ता था। आप गौर करें, वे बैल पर अपने दोनों पैर इस तरह करके बैठे थे। और बैल तेज भागा जा रहा था। वे बैल को पकड़े हुए थे और उनका पैर इस तरह था। वे अपनी शादी के लिए जा रहे थे। उनकी बरात में कोई आदमी एक आँख का, तो कोई बिना नाक का, हर तरह के हास्यास्पद व्यक्ति जा रहे थे। और उनकी पत्नी (पार्वती) लोगों द्वारा शिवजी के प्रति अभद्र बातें करने से अजीब बेचैनी महसूस कर रही थीं। वह (शिवजी) जरा भी चिन्तित नहीं थे कि उनकी इज्जत क्या है ? लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि आप हिप्पी बन जाएं। आप देखें। जब आप एक बार ऐसा सोचना शुरू कर दें, एक समस्या उठ खड़ी होती है। आप हिप्पी बन जाएंगे। बहुत लोगों की धारणा है कि यदि शिवजी की तरह व्यवहार किया जाय तो आप भी शिव बन जाएंगे। कई लोग इस प्रकार का भी विश्वास रखते हैं कि यदि आप गांजा लें तो आप भी शिव बन जाएंगे क्योंकि शिवजी गांजा लेते थे। (लोग नहीं सोचते कि) वह (शिवजी) गांजा इस संसार से खत्म करने के लिए लेते थे। उनके लिए यह क्या मतलब रखता है, चाहे उनके लिए गांजा हो या नहीं। आप उनको कुछ भी दीजिए उनके लिए कोई मतलब नहीं रखता। वह कभी भी 'होश खोये' मालूम नहीं देंगे। इसका कोई सवाल नहीं। वह सब कुछ खाते थे। (शिवजी) जैसे सभी चीजों के प्रति निर्लिप्त थे, लोग वैसे ही रहने को सोचते हैं। वह अपनी दिखावे के बारे में तनिक भी चिन्तित नहीं थे। शिवजी के लिए दिखावा क्या ? वह जिस प्रकार भी दिखलायी पड़ते हैं, उनकी सुन्दरता है। वह इसके लिए कुछ भी नहीं चाहते थे।

अतः किसी चीज में लिप्त होना कुरूपता है, अभद्रता है। लेकिन आप जैसा चाहें वैसा वस्त्र पहन सकते हैं। यदि आप साधारण वस्त्र में भी हैं, तो आप अत्यधिक शानदार व्यक्ति लगेंगे। लेकिन ऐसा नहीं कि आप कहें, "ठीक है, तब ऐसी दशा में हम एक चद्दर लपेट कर रहेंगे।"

आप के अंदर, आत्मा के जरिए जिस सुन्दरता की निखार हुई है, वह शक्ति प्रदान करती है ताकि आप जो चाहें वस्त्र धारण कर लें। इससे आपकी सुन्दरता में कोई अंतर नहीं होता। आप की सुन्दरता हर समय बनी हुई है।

परन्तु क्या आप उस अवस्था को प्राप्त कर चुके हैं ? उस अवस्था को आप तभी प्राप्त कर सकते हैं जब आप की आत्मा आप के मस्तिष्क में आ जाती

है। अहंकारयुक्त व्यक्ति के लिए यह बहुत कठिन है। और यही कारण है कि वे लोग आनन्द नहीं उठा पाते हैं। थोड़े से बहाने से ही वे लुढ़क जाते हैं। और आत्मा जो कि आनन्द का स्रोत है प्रकट नहीं होती, दिखलायी नहीं पड़ती है। 'आनन्द' ही सुन्दरता है। आनन्द स्वयं सुन्दरता है। परन्तु इस अवस्था को पाना पड़ता है।

विभिन्न तरीकों से लगाव आता है। आप इसमें थोड़ा आगे बढ़ें तो आपका अपने परिवार से लगाव हो जायेगा। मेरे बच्चे का क्या होगा ? मेरे पति का क्या होगा ? मेरी मां का, मेरी पत्नी का क्या होगा ? यह, वह, सब निरर्थक।

तुम्हारा बाप कौन है व तुम्हारी माँ कौन है ? कौन तुम्हारा पति है और कौन तुम्हारी पत्नी है ? शिवजी यह सब कुछ नहीं जानते हैं। उनके लिए 'वह' और 'उनकी शक्ति' अपृथक वस्तुएं हैं। अतः 'वह' एक व्यक्तित्व के प्रतीक हैं। कोई 'द्वैतभाव' नहीं है। द्वैतभाव होता है तभी आप कहते हैं 'मेरी' पत्नी। आप लगातार कहते जाते हैं 'मेरी' नाक, 'मेरा' कान, 'मेरा' हाथ, 'मेरा', मेरा, मेरा, मेरा···। आप नीचे गिरते जाते हैं।

जब तक आप 'मेरा' कहेंगे वहां कुछ न कुछ द्वैतभाव होगा। लेकिन जब 'मैं' (श्रीमाता जी) कहती हूं, 'मैं' 'मेरी' नाक, तब कोई द्वैतभाव नहीं है। शिव-शक्ति अर्थात शक्ति-शिव। कोई द्वैतभाव नहीं है। फिर भी हम पूर्णरूप से द्वैतभाव में रहते हैं और उसके कारण लगाव होता है। यदि द्वैतभाव नहीं है तो लगाव कैसा ? यदि आप ही प्रकाश हैं और आप ही दीपक, तब द्वैतभाव कहां ? यदि आप ही चन्द्रमा हैं और आप ही चन्द्रिका तो द्वैतभाव कहां ? यदि आप ही सूर्य हैं और आप ही सूर्य का प्रकाश, आप ही शब्द हैं तथा आप ही उसका अर्थ तब द्वैतभाव कहाँ ? परन्तु जब पृथकता होती है, वहां द्वैत होता है। और इस पृथकता के कारण आप लगाव महसूस करते हैं। चूंकि जब आप स्वयं 'वह' हैं, तब आप कैसे उससे लिप्त होंगे ? क्या आप इस बात को समझ रहे हैं ? क्योंकि 'आप' में व आपके 'उस' के बीच अन्तर तथा दूरी है, आप उससे लिप्त हो जाते हैं ?

परन्तु, यह 'मैं' हूँ, दूसरा कौन है ? सम्पूर्ण विश्व मैं हूं, दूसरा कौन है ? सब कुछ 'मैं' हूँ, दूसरा कौन है ?

ऐसा नहीं है कि यह मस्तिष्क की तरंग या मस्तिष्क के अहम् (अहंकार) का भोंका है। अतः दूसरा कौन है ? कोई नहीं।

यह तभी सम्भव है जब आप की आत्मा आप के मस्तिष्क में आ जाए और आप विराट के स्वयं अंग प्रत्यंग बन जाएं। जैसे कि मैं बता चुकी हूँ, विराट ही मस्तिष्क है। तब आप जो कुछ भी करते हैं, चाहे आप अपनी नाराजगी दिखाते हैं, चाहे स्नेह दिखाते हैं, चाहे अपनी करुणा दिखाते हैं या जो कुछ भी, यह आत्मा है जो ऐसा व्यक्त करती है। क्योंकि मस्तिष्क अपना अस्तित्व खो चुका है। सीमित कहा जाने वाला मस्तिष्क असीमित आत्मा बन चुका है।

ऐसे विषय में मैं कैसे उपमा (समानता) दूं, मुझे नहीं मालूम। सचमुच मुझे मालूम नहीं। परन्तु हम यह कर सकते हैं कि इसको समझने की कोशिश करें। यदि रंग को समुद्र में डाल दिया जाय तो समुद्र रंगीन हो जाएगा यह संभव नहीं है। लेकिन आप इसे समझने की कोशिश करें। यदि थोड़ा सा सीमित रंग समुद्र में डाल दिया जाय तो रंग अपना अस्तित्व पूर्णतया खो देगा। अब आप दूसरी तरह से सोचें। यदि समुद्र को रंगीन कर दिया जाय और उसे वातावरण में बिखेर दिया जाय या आंशिक रूप से किसी हिस्से में, या किसी स्थान पर या किसी अणु

पर या किसी भी वस्तु पर, तो सब कुछ रंगीन हो जाएगा।

आत्मा समुद्र की भांति है जिसके अंदर रोशनी भरी पड़ी है। और जब इस समुद्र (रूपी 'आत्मा') को आपके मस्तिष्क के छोटे प्याले में उड़ेल दिया जाता है तब प्याला अपना अस्तित्व खो देता है और सब कुछ आध्यात्मिक (spiritual) हो जाता है। सभी कुछ। आप सब कुछ आध्यात्मिक बना सकते हैं। हरेक चीज। आप जिस चीज को भी स्पर्श करें वह आध्यात्मिक हो जाती है। रेत आध्यात्मिक हो जाता है, जमीन आध्यात्मिक हो जाती है, वातावरण आध्यात्मिक बन जाता है, ग्रह-नक्षत्र इत्यादि भी आध्यात्मिक बन जाते हैं। सब कुछ आध्यात्मिक हो जाता है।

यह आत्मा समुद्र (की भांति असीम) है। जबकि आप का मस्तिष्क सीमित है।

आपके सीमित मस्तिष्क में निर्लिप्तता (detachment) लानी होगी। मस्तिष्क की सभी सीमाओं को तोड़ना होगा। ताकि जब यह समुद्र इस मस्तिष्क को प्लावित कर देता है तब यह उस छोटे प्याले को तोड़ दे, और उस प्याले का कण-कण रंग में रंगा जाय। सम्पूर्ण वातावरण, प्रत्येक वस्तु, जिस पर भी आपकी दृष्टि जाय, रंग जानी चाहिए। आत्मा का रंग, आत्मा का प्रकाश है, और ये आत्मा का प्रकाश कार्यान्वित होता है। कार्य करता है, सोचता है, सहयोग प्रदान करता है, सब कुछ करती है।

यही कारण है कि आज मैंने शिवतत्व को मस्तिष्क में लाने का निश्चय किया है।

इसका पहला तरीका है कि आप अपने मस्तिष्क को यह कह कर शिवतत्व की ओर लाएं "ए, मस्तिष्क महाशय ! तुम कहाँ जा रहे हो ? तुम इस पर ध्यान दे रहे हो, उस पर ध्यान दे रहे हो, लिप्त हो रहे हो। अब अलग हो जाओ। केवल मस्तिष्क बनो। केवल मस्तिष्क। अलग हो जाओ, पृथक हो जाओ।

और उसके बाद यह निर्लिप्त मस्तिष्क आत्मा के रंग से पूर्णतया भर जायगा। यह अपने आप होगा। जब तक आपके चित्त पर ये सीमाएं हैं यह घटित नहीं होगा। अतः इसके लिए वास्तविक रूप से, निश्चय से तपस्या करनी होगी। हरेक व्यक्ति को।

मैं आप लोगों के साथ हूँ। अतः उसके लिए आपको पूजा करने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन वह अवस्था प्राप्त करनी है, और उस अवस्था को पाने के लिए आप को पूजा करना आवश्यक है। मुझे उम्मीद है कि मेरी इस जिन्दगी में आप में से बहुत से लोग 'शिव तत्व' बन जाएंगे। लेकिन आप यह न सोचे कि मैं आप लोगों को दुःख उठाने के लिए कह रही हूँ। इस प्रकार के उत्थान में किसी प्रकार का दुःख नहीं है। यदि यह समझ लें कि यह पूर्ण आनन्दमय अवस्था है। उस समय आप 'निरानंद' हो जाते हैं। सहस्रार में इसी आनन्द का नाम 'निरानंद' है और आप को मालूम है, 'आपकी माँ' का नाम 'निरा' है। अतः आप 'निरानंद' हो जाते हैं।

अतः आज शिव की पूजा विशेष महत्व (अर्थ) रखती है। मुझे आशा है आज की इस पूजा में आप जो कुछ भी बाह्य रूप में, स्थूल-रूप में करेंगे, वह अति सूक्ष्मतर रूप में भी घटित होगा। और मैं आपकी आत्मा को आपके मस्तिष्क में पहुँचाने की कोशिश कर रही हूँ। परन्तु कभी कभी यह कठिन होता है, क्योंकि आपका मस्तिष्क अभी भी लिप्त अवस्था में है।

अपने को पृथक (निर्लिप्त) करने की कोशिश

करें। क्रोध, वासना, लालच, सभी वस्तुओं को कम करने की कोशिश करें। आज मैंने डॉ० वारेन से कहा—"सभी को कम खाने के लिए कहो, पेटू की तरह नहीं" देखिए कभी कभी किसी बड़ी एक दावत में ज्यादा खा लें, लेकिन हर समय उस तरह नहीं खा सकते। यह एक सहजयोगी की निशानी नहीं है। नियंत्रण करने की कोशिश करें। अपनी बातचीत को नियंत्रित करें. चाहे आप अपनी बात में नाराजगी प्रकट करें या दया भावना दर्शाए या कृत्रिम करुणा।

मैं जानती हूँ आपमें से कुछ लोग ज्यादा नहीं कर पाएंगे। ठीक है। मैं यह बात कई बार बतलाने की कोशिश करूंगी। मैं आप लोगों की सहायता करने की कोशिश करूंगी लेकिन आप लोगों में से अधिकांश लोग इसको कर सकते हैं। और आपको इसके लिए प्रयास करना चाहिए।

अतः आज से हम लोग गहरे स्तर पर सहजयोग प्रारम्भ करने जा रहें हैं। जहां आपमें से कुछ लोग पहुँच न सकें। परन्तु आप में से अधिकांश लोगों को और गहराई में उतरने की कोशिश करनी चाहिए। प्रत्येक को। इसके लिए ज्यादा पढ़े लिखे या उच्च पद वाले व्यक्ति की आपको जरूरत नहीं है। नहीं, बिल्कुल नहीं।

परन्तु जो व्यक्ति ध्यान में उतरते हैं, समर्पित होते हैं, वह गहराई में उतरते हैं। क्योंकि वे प्रथम जड़ों की भाँति होते हैं। जिन्हें दूसरों के लिए अधिक गहराई में जाना है, जिससे और दूसरे लोग अनुसरण कर सकें।

अब आज की पूजा के लिए हम लोग संक्षिप्त में 'श्री गणेश' बोलेंगे। इसके लिए मेरे पैर धोने या उस पर कुछ लगाने की जरूरत नहीं है। सिर्फ अथर्वशीर्ष कहेंगे। आप···

'शिव' हर समय स्वच्छ, शुद्ध व निष्कलंक हैं। अत निष्कलंक को आप क्या धोने जा रहे हैं? कोई कह सकता है कि, माँ! जब हम आप के चरण पखारते हैं तो हमें पानी में आप के वाइब्रेशन मिलते हैं। लेकिन यह (कमलवत् चरण) इतना निलिप्त है कि इसको धोने की जरूरत ही नहीं। ऐसी अवस्था में आप पूर्णतया घुल जाते हैं, पूर्णतया स्वच्छ।

इसके बाद हम 'देवी' का पूजन करेंगे क्योंकि 'गौरी' जो कुमारी कन्या है, उसकी पूजा होनी चाहिए। अतः हम 'कुमारी कन्या' के १०८ नामों का उच्चारण करेंगे। उसके उपरान्त 'शिव पूजा' करेंगे।

मुझे खेद है, इस छोटे भाषण में मैं आप को इसके विषय में सब कुछ नहीं बता सकती। परन्तु आपके साक्षात्कार में निलिप्तता स्वयं व्यक्त होना शुरू हो जाना चाहिए। निलिप्तता। समर्पण करना क्या है? कुछ नहीं। क्योंकि आप जब निलिप्त हैं, आप स्वतः समर्पित हैं। जब आप किसी दूसरी चीजों से लिप्त हैं तो आप समर्पित नहीं हैं।

मुझको समर्पित करने को क्या है? मैं तो ऐसी निलिप्त हूँ कि मैं यह सब नहीं समझती। मैं आप लोगों से क्या पा सकती हूँ? कुछ भी नहीं? मैं इतनी निलिप्त हूँ।

अतः आज हम सभी प्रार्थना करें कि, "हे प्रभु! हमें शक्ति और वह आकर्षण स्रोत प्रदान करें जिसके द्वारा हम खुशियों के अन्य सभी आकर्षण, अहकार के आनन्द को, या अन्य सभी चीजें जिसके बारे में हम सोचते हैं, सभी का परित्याग कर दें। लेकिन हम 'शिवतत्व स्वरूप' 'निर्मल आनन्द' में पूर्णतया गोता लगाएं (अर्थात आनंद मग्न हो जायें)।"

मैं आशा करती हूँ मैं आप लोगों को यह सम-

झाने में सफल रही हूँ कि मैं आज यहाँ क्यों उपस्थित हूँ और आज क्यों इतना बड़ा दिन है। आप जो लोग यहाँ (मौजूद) हैं, बड़े ही भाग्यशाली व्यक्ति हैं। आपको सोचना चाहिए कि आप के प्रति परमात्मा कितने दयालु थे कि उन्होंने आज आपको यहां रहने के लिए व यह सब सुनने के लिए चुना।

और जब आप एक बार निर्लिप्त हो जाते हैं, आप अपने को एक जिम्मेवार 'अभियुक्त' महसूस करना शुरू कर देंगे। जिम्मेवार। अहम् (अहंकार) व्यक्त करने वाली जिम्मेवारी नहीं, अपितु जिम्मेवारी जो स्वयं कार्यान्वित होती है। जो स्वयं अभिव्यक्त होती है। स्वयं प्रकट होती है।

परमात्मा आपको सुखी रखे।

★ निर्मल वाणी ★

एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि आत्म-साक्षात्कार के बाद परमेश्वर के राज्य में प्रस्थापित होने तक बहुत बाधाएं हैं, और श्री कल्कि शक्ति का संबध इसी से संलग्न है। आत्म-साक्षात्कार प्राप्त होने के बाद भी जो लोग अपनी पुरानी आदतों व प्रवृत्तियों में मग्न हैं उनकी स्थिति को 'योगभ्रष्ट' स्थिति कहते हैं।

❀ ❀ ❀

आप अपने चित्त की छोटी छोटी वस्तुओं को निकाल बाहर करें, उनका परित्याग करें। आपको एक महान् सम्पन्न व्यक्तित्व की तरह से रहना है, जिसे औरों को सहायता, मार्ग-दर्शन, सहारा और जागृति, हजारों की संख्या में देना है।

❀ ❀ ❀

सहस्रार का एक मन्त्र है। वह है "निर्मला", जिसका अर्थ है कि प्रत्येक को स्वच्छ, सुथरा, पवित्र और निष्कलङ्क रहना चाहिए।

❀ ❀ ❀

जब आत्मा का द्वार खुलता है तो किसी भी चीज की कमी नहीं रहती। माँ यही द्वार खोलती हैं। इसीलिए ये माँ गणेश को प्रिय हैं। जो मिलने पर दूसरी किसी भी चीज की चाहत नहीं रहती। इस तरह की स्थिति जब आती है तब पूर्ण आत्म-साक्षात्कार हुआ, यह समझिए। फिर उसी में रत हो जाएंगे, और धन्य-धन्य लगता है।

❀ ❀ ❀

श्री माता जी का प्रवचन

प्रपंच और सहजयोग*

डा० एन्टोनियो डि सिल्वा हाई स्कूल,
दादर, बम्बई,
२६ नवम्बर, १९८४

सत्य की खोज में रहने वाले आप सब लोगों को हमारा नमस्कार।

आज का विषय है "प्रपंच और सहजयोग" सर्वप्रथम 'प्रपंच' यह क्या शब्द है ये देखते हैं। 'प्रपंच' पंच माने हमारे में जो पंच महाभूत हैं, उनके द्वारा निर्माण की हुई स्थिति। परन्तु उससे पहले 'प्र' आने से उसका अर्थ दूसरा हो जाता है। वह है इन पंचमहाभूतों में जिन्होंने प्रकाश डाला वह 'प्रपंच' है।

"अवघाची संसार सुखाचाकरीन" (समस्त संसार सुखमय बनाऊंगा) ये जो कहा है वह सुख प्रपंच में मिलना चाहिए। प्रपंच छोड़कर अन्यत्र परमात्मा की प्राप्ति नहीं हो सकती। बहुतों की कल्पना है कि 'योग' का मतलब है कहीं हिमालय में जाकर बैठना और ठण्डे होकर मर जाना। ये योग नहीं है, ये हठ है। हठ भी नहीं, बल्कि थोड़ी मूर्खता है। ये जो कल्पना योग के बारे में है अत्यन्त गलत है। विशेषकर महाराष्ट्र में जितने भी साधु-सन्त हो गये वे सभी गृहस्थी में रहे। उन्होंने प्रपंच किया है। केवल रामदास स्वामी ने प्रपंच नहीं किया। परन्तु 'दास बोध' (श्री रामदास स्वामी विरचित मराठी ग्रथ) में हर-एक पन्ने पर प्रपंच बह रहा है। प्रपंच छोड़कर आप परमात्मा को प्राप्त नही कर सकते। यह बात उन्होंने अनेक बार कही है। प्रपंच छोड़कर परमेश्वर को प्राप्त करना, ये कल्पना अपने देश में बहुत सालों से आई है। इसका कारण है श्री गौतम बुद्ध ने प्रपच छोड़ा और जंगल गये और उन्हें वहां आत्मसाक्षात्कार हुआ। परन्तु वे अगर ससार में रहते तो भी उन्हें साक्षात्कार होता। समझ लीजिए हमें दादर जाना है, तो हम सीधे मार्ग से इस जगह पहुँच सकते हैं। परन्तु अगर हम भिवंडी गए, वहां से पूना गये, वहां से और चार-पांच जगह घूमकर दादर पहुँचे। एक रास्ता सीधा और दूसरा घूम-घामकर है। बहुत घूमकर आया हुआ मार्ग ही सच्चा है, ये बात नहीं। उस समय सुगम मार्ग नहीं था इसलिए वे दुर्गम मार्ग से गए। जो सुगम है उसे उन्होंने दुर्गम बनाया। इसलिए क्या हमें भी दुर्गम बना लेना चाहिए? अर्थात् जो सुगम है उसे सभी ने बताया है। 'सहज' है। सहज समाधि में जाना। सभी संत-साधुओं ने बताया है, "सहज समाधी लागो"। कबीर ने विवाह किया था। गुरु नानक जी ने विवाह किया था। जनक से लेकर अब तक जितने भी बड़े-बड़े अवधूत हो गए हैं उन सभी ने विवाह किया था। और उनके बाद बहुत से आए। उन्होंने विवाह नहीं किया, परन्तु किसी ने भी विवाह संस्था को गलत नहीं कहा। और जिसे हम प्रपंच कहते हैं वह गलत है ऐसा नहीं कहा है। तो सर्व-

* मराठी भाषण से अनुवादित।

प्रथम हमें अपने दिमाग से ये कल्पना हटानी चाहिए कि अगर हमें योग मार्ग से जाना है तो हमें प्रपच छोड़ना होगा। उलटे अगर आप प्रपंच करते हैं तो आपको सहजयोग में जरूर आना चाहिए।

शुरू में इस दादर में जब हमने सहजयोग शुरू किया तो सब लोग प्रपंच की शिकायतें लेकर आते थे। मेरी सास ठीक नहीं है, मेरा पीतसरे ठीक नहीं है, मेरी पत्नी ठीक नहीं है, मेरे बच्चे ठीक नहीं हैं। इस तरह सभी प्रपंच की जो छोटी-छोटी शिकायतें हैं वही लेकर सहजयोग में आते थे। शुरू में ऐसे ही होता है। हम परमात्मा के पास प्रपंच की तकलीफों से तंग आकर या प्रपंच के दुःखों को दूर करने के लिए जाते हैं, और परमेश्वर के पास जाकर भी यही मांगते हैं, "हे परमात्मा मेरा घर ठीक रहे। मेरे बच्चे ठीक रहें। हमारी गृहस्थी सुख से रहे। सभी खुशी से रहें।" बस। मनुष्य की वृत्ति यहां तक हल्की होती है, और उसी छोटेपन से वह देखता है। परन्तु यह छोटापन-हलकापन जरूरी है। वह नहीं होगा तो आगे का मामला नहीं बनने वाला। पहली सीढ़ी के बगैर दूसरी सीढ़ी पर नहीं आ सकते। तो सहजयोग की सबसे बड़ी सीढ़ी प्रपंच होना जरूरी है। हम संन्यासी को आत्मसाक्षात्कार नहीं दे सकते। नहीं दे सकते। क्या करें? बहुत बार करके देखा, पर मामला नहीं बनता। उसके लिए व्यर्थ का बड़प्पन किस लिए? उसका कारण है कि हमने बाह्य में सन्यासी के कपड़े पहने हैं, पर अन्दर से क्या आप सन्यासी हैं? सन्यास एक भाव है। ये कोई कपड़े पहनकर दिखावा नहीं है कि हम संन्यासी हैं, हमने संन्यास लिया है, हमने घर छोड़ा, ये छोड़ा, वह छोड़ा, ऐसा कहकर जो लोग कहते हैं कि हम योग मार्ग तक पहुँचेंगे, ये अपने आपको भुलावा है। अगर आप पलायनवादी हैं, आपमें पलायन भाव (escapism) है तो उसका कोई इलाज नहीं है। जिस मनुष्य में थोड़ी भी सुबुद्धि है उसे सोचना चाहिए कि यहां हम प्रपंच में हैं। यहां से निकलकर हमने कुछ प्राप्त किया भी तो उसका क्या फायदा? समझ लीजिए किसी जंगल में आपको ले गये और वहां बैठकर आपने कहा, "देखिए, मैं कैसे पानी के बगैर रह सकता हूँ?" तो उसमें कौन-सी विशेष बात है? पानी में रहकर भी आपको पानी की जरूरत नहीं है, आप पानी में रहकर भी पानी से अलिप्त हैं, ऐसी जब आपकी स्थिति हो, तब सच्चा प्रपंच हो सकता है। और आज हमें उसी की जरूरत है। उस प्रपंच की।

आपको जनक जी के बारे में मालूम होगा। नचिकेता ने सोचा, ये जनक राजा जो अपने सर पर मुकुट पहनते हैं, इनके पास सब दास-दासी हैं, नृत्य गायन होता रहता है, ये जब हमारे आश्रम में आते हैं तो हमारे गुरू इनके चरण छूते हैं? ये ऐसे क्या महान है? तो उनके गुरू ने कहा, "तुम ही जाओ और देखो ये कैसे महान हैं?" तो नचिकेता एकदम उनके आगे जाकर खड़ा हुआ और कहने लगा, "आप मुझे आत्म-साक्षात्कार दीजिए। मेरे गुरू ने कहा है, आप आत्म-साक्षात्कार देते हैं। सो कृपा करके आप मुझे आत्म-साक्षात्कार दीजिए।" उन्होंने कहा, "देखो, तुम सारे विश्व का ब्रह्मांड भी मांगते तो मैं देता, पर तुम्हें मैं आत्म-साक्षात्कार नहीं दे सकता। उसका कारण है, उस चीज का तत्व ही जिसे मालूम नहीं, उस मनुष्य को आत्म-साक्षात्कार कैसे दें? जो मनुष्य तत्व को समझेगा वही उसमें उतर सकता है।" तो प्रपंच का तत्व है 'प्र' और वह 'प्र' माने प्रकाश। वह जब तक आपमें जागृत नहीं होता तब तक आप 'पंच' में हैं 'प्रपंच' में नहीं उतरे।

नचिकेता ने जब उपरोक्त सवाल राजा जनक से पूछा, तो उन्होंने कहा कि अब तुम मेरे साथ रहो। और बाकी सब कहानी तो आपको मालूम है। मुझे वह फिर से कहने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु अन्त में नचिकेता समझ गया, इस मनुष्य (राजा जनक) का किसी भी प्रकार का लगाव

नहीं है, या कहिए चिन्ता नहीं है, न किसी चीज के प्रति आत्मीयता है कि जिसे हम संसार कहते हैं, इस तरह की चीजों की। और ये एक अवधूत की तरह रहने वाला मनुष्य है। सिर पर मुकुट धारण करेगा, धरती पर भी सो जाएगा, जैसे बादशाह है। उसे कोई आराम की जरूरत नहीं। कहीं तो पलंग पर सोएगा, गद्दियों पर लेटेगा, जमीन पर ही पड़ा रहेगा, ऐसा ये बादशाह है। उसे किसी भी चीज की परवाह नहीं। उसे किसी ने भी पकड़ा नहीं है। जो मनुष्य प्रपंच में है उसको न किसी आराम की और न किसी गुलामी की आदत लगती है। उसे किसी पत्थर पर सर टिकाकर सोने को कहा तो वह सो सकता है। चोकर (रूखी-सूखी रोटी) भी खा सकता है, और दावत भी खा सकता है। उसे कल अगर पूछा जाए, भई अब आश्रम बनाना है, तो कैसे करें ? तो वह सब कुछ बता देगा। सीमेन्ट से लेकर सभी बातें बता देगा। ये कहां मिलेगा ? वो कहां मिलेगा ? सब कुछ बता देगा। उसे अन्दर से किसी चीज की पकड़ नहीं। ये बात तत्व की बात है। इसे आप समझ लीजिए।

नामदेव जी ने एक कविता लिखी है और वही नानक साहब ने भी वन्दनीय मानकर गुरु ग्रन्थ साहिब में सम्मिलित की है। वह अत्यन्त सुन्दर है। उसका मैं केवल यहां पर आशय वर्णन करती हूँ। उस कविता में कहा है, "आकाश में पतंग उड़ रही है और एक लड़का हाथ में उस पतंग की डोर पकड़ कर खड़ा है। वह सबसे बातें कर रहा है, हंस रहा है, आगे पीछे जा रहा है, यहां वहां भाग रहा है। परन्तु उसका सारा चित्त (Attention) उस पतंग पर है।" दूसरे दोहे में उन्होंने कहा है "बहुत-सी औरतें पानी भरकर ले जा रही हैं और मार्ग से जाते समय आपस में मज़ाक कर रही हैं, घर की यह वह बातें कर रही हैं। परन्तु उनका सारा चित्त सर पर रखे घड़ों पर है कि पानी न गिरे"। इसी तरह और एक दोहे में माँ का वर्णन है, "एक माँ बच्चे को गोद में लिए सभी काम करती है। चूल्हा जलाती है, खाना बनाती है, सभी प्रकार के काम करती है। उन कामों में कभी झुकती है, कभी भागती है। सब कुछ उसे करना पड़ता है, परन्तु उसका सारा चित्त पूरे समय उस बच्चे पर रहता है कि बच्चा गिर न जाय।" इसी तरह साधु-सन्तों का है। सभी तरह के कामों का उन्हें ज्ञान होता है। वे सभी कार्य करते हैं किन्तु वे सब करते समय उनका सारा चित्त अपनी आत्मा पर होता है। ये सभी लोग बिल्कुल आपकी तरह गृहस्थाश्रम में रहने वाले होते हैं, उनके बाल-बच्चे होते हैं। सब कुछ होते हुए भी इनमें जो वैचित्र्य है वह आपको तत्व में आकर पहचानना चाहिए। वह क्या वैचित्र्य है ? और वही माने 'सहजयोग' है। वह वैचित्र्य अपने में आने पर अपने को भी उससे क्या लाभ होते हैं ये देखना जरूरी है। क्योंकि प्रपंच में आप लाभ और हानि पहले देखते हैं। लाभ कितना है ? हानि कितनी है ? सर्वप्रथम कहना ये है कि परमात्मा उन सभी से परे है, ऐसा कहा जाता है। परन्तु बहुतों को उसका मतलब मालूम नहीं। और आजकल के समय में परमात्मा की बातें करने से लोगों को लगता है "इन महिला को अभी आधुनिक शिक्षा वगैरह मिली नहीं है और ये कोई पुराने जमाने की बेकार नानी-दादी की कथाएं सुना रही हैं।" परन्तु परमेश्वर है और वह रहेगा। वह अनंत में है। परन्तु परमेश्वर हमारे साथ प्रपंच में किस तरह कार्यान्वित होता है यह देखना चाहिए।

सर्वप्रथम अब देखें कोई समस्या है। किसी ने मुझ से कहा, "माताजी, मेरे घर में तकलीफ है, मुझे काम-धंधा नहीं है।" इस तरह की बातें, अत्यन्त छोटी-छोटी बातें, जड-लौकिक बातें, "ये ऐसा है, वैसा है" और थोड़े दिनों के बाद वह कहता है, "माताजी, सब कुछ ठीक हो गया।" तो ये सब कैसे होता है ? यह देखना चाहिए। एक दिन की बात है, हमारी एक शिष्या है, विदेशी है। मैं 'शिष्या' वगैरा तो कहती नहीं हूँ 'बच्चे' ही कहती हूँ। तो दोनों लड़कियाँ थीं। वे दोनों जर्मनी में

एक मोटर में जा रही थीं। और जर्मनी में 'ऑटोबान' करके बहुत बड़े रास्ते होते हैं। और उस पर से बड़ी तेजी से गाड़ियाँ इधर-उधर दौड़ती हैं। तो उन्होंने मुझे चिट्ठी लिखी, दोनों तरफ से ट्रक, बड़ी-बड़ी बसें, बड़ी-बड़ी कारें, जो 'डबल-लोडर्स' होती हैं, वह सब जा रही थीं और बीच में हमारी मोटर। उसका ब्रेक भी काम नहीं कर रहा था और गाड़ी भी 'बबलिंग' (कंपन) करने लगी। तो मुझे लगा कि अब मैं गयी, अब तो मैं बच ही नहीं सकती। अगर ब्रेक भी कुछ ठीक रहता तो कुछ उम्मीद थी। पर वह ठीक नहीं था।" तो उस स्थिति में उसमें एक तरह की प्रेरणा आ गयी। जिसे हम कहेंगे 'इमरजेन्सी की प्रेरणा।' वह निर्माण हो गया। वह है कि 'अब सब कुछ गया, अब कुछ भी नहीं रहा, विनाश का समय आ गया।' तो शरणागत होकर उसने कहा, "श्री माताजी, अब आपको जो करना है वह करें। मैं तो आँख मूंद लेती हूँ।" और उसने आँखें मूंद लीं। उसकी चिट्ठी में लिखा था, "थोड़ी देर बाद मैंने देखा तो मेरी कार अच्छी तरह से एक तरफ आकर रुकी हुई खड़ी थी और मेरा ब्रेक भी ठीक हो गया था।" अब माताजी ने कुछ नहीं किया था, ये आप देखिए। यह कैसे होता है? मतलब यह जो परिणाम हुआ है वह किसी न किसी कारणवश हुआ है। मतलब 'कारण व परिणाम'। समझ लीजिए आपके घर में झगड़ा है। उसका कारण है आपकी पत्नी या आपकी माँ या आपके पिताजी या कोई 'अ' मनुष्य और उसका परिणाम है घर में अशान्ति। जो मनुष्य सर्वसाधारण बुद्धि का होगा वह 'परिणाम' से ही लड़ता रहेगा। अभी मुझे इससे लड़ना है। फिर कोई दूसरी लड़ाई निकल आएगी। फिर तीसरी। अब जो कारण है उस पर कौन सोचते हैं? कुछ लोग सूक्ष्म बुद्धि के होते हैं। वे उसका जो 'कारण' हैं उससे लड़ते हैं। उस कारण से लड़ाई करने पर वह कारण भी उनसे लड़ना शुरू कर देता है। और 'कारण और परिणाम' इसके चक्कर में पड़ने से वे दोनों ही समस्या वैसी की वैसी रह जाती हैं। उसके परे वे जा नहीं सकते। और इसलिए 'प्रपंच करना बहुत कठिन काम है', ऐसा सब लोग कहते हैं। इसका इलाज क्या है? इसका इलाज ये है कि उसका जो कारण है, उस कारण के परे जाना होगा। उसका जो कारण था, ब्रेक टूट गया था, उस ब्रेक से वह लड़ रही थी। परन्तु जब उसे महसूस हुआ, इन सबके परे भी कुछ है कोई शक्ति है और वह शक्ति कारण के परे होने से कारण भी नष्ट हो गया और उसका परिणाम भी नष्ट हो गया। ये ऐसे होता है। आप विश्वास करिए या मत करिए, पर ये बात होती है। परन्तु ये अन्ध-विश्वास से नहीं होती है। अब बहुत से लोग मेरे पास आकर कहते हैं, "माताजी हम इतना भगवान को याद करते हैं परन्तु हमें कैन्सर हो गया। हम इतना करते हैं, मन्दिर में जाते हैं, सिद्धिविनायक के मन्दिर में रोज जाकर खड़े रहते हैं, घंटे-घंटे। मंगल के दिन तो विशेष करके जाते हैं, परन्तु तब भी हमारा कुछ भी अच्छा नहीं हुआ, इस भगवान ने हमारा कुछ भी अच्छा नहीं किया, फिर हम इसे क्यों भजें?" ठीक है। परन्तु आप जिस भगवान को बुला रहे हैं उसका आपका क्या कोई कनेक्शन (सम्बन्ध) हुआ है? आपका जब तक कनेक्शन नहीं हुआ, तब तक अच्छा कैसे होगा? भगवान तक आपके टेलीफोन की कनेक्शन तो होना चाहिए। इस तरह आप रातदिन परमेश्वर की पूजा करते हैं? परन्तु क्या आप जो बोल रहे हो उस परमेश्वर को सुनाई दिया है? चाहे जो धंधे करो, चाहे जैसा वर्ताव करो और उसके बाद 'हे परमात्मा, मुझे आप देते हैं कि नहीं?' कहकर उसके सामने बैठ जाना। उस परमात्मा ने आपको किसलिए देना है? आपका कोई कनेक्शन होगा तो आप कुछ भारत सरकार से माँग सकते हैं, क्योंकि आप उसके नागरिक हो, परमात्मा के साम्राज्य के नहीं। पहले उसके साम्राज्य के नागरिक बनिए, फिर देखिए उसकी याद करने के पहले ही परमेश्वर ये करता है कि नहीं। अब समझ लीजिए यहाँ पर बैठे-बैठे ही कोई अगर

इंग्लैण्ड की रानी को कहेगा कि वह हमारे लिए ये नहीं करती, वह नहीं करती। वह आपके लिए क्यों करने लगी ? तो यहां तो परमात्मा है और वह परमात्मा आपके लिए क्यों करने लगा ? आप उनके साम्राज्य में अभी आए नहीं हैं। केवल उन पर तानाशाही करना 'हे परमात्मा'। जैसे कोई वे आप की जेब में बैठे हैं। और अब आपको ये भी विचार नहीं है कि हमें परमात्मा का स्मरण करना है। सुस्मरण कहा है, स्मरण नहीं कहा हैं। सुस्मरण करते समय भी 'सु' कहा है। ये देखिए, "सु" माने क्या ? जैसे 'प्र' शब्द है वैसे ही 'सु' शब्द है। 'सु' माने जहां मनुष्य का सम्बन्ध होकर आपमें मांगल्य का आशीर्वाद आया हुआ है तभी वह सुस्मरण होगा। अन्यथा तोते की तरह बिना समझे बोलना है। उसका असर युवा पीढ़ी पर होता है। वे कहते हैं "इस परमात्मा का क्या अर्थ हुआ ? परमात्मा का नाम लेकर यहां दो बाबा आए और हमारी माँ का पैसा ले गये, वहां कोई गले में काला धागा बांध गये और रुपया ले गए। ऐसे परमात्मा का क्या अर्थ हुआ ?" इसलिए उनका कहना ठीक लगता है। फिर उनकी तरह और लोग भी कहते हैं "परमात्मा है ही नहीं।" परन्तु सर्वप्रथम अपनी समझ में ये गलती हुई है कि क्या हमारा परमात्मा के साथ कोई सम्बन्ध हुआ है ? क्या हमारा उन पर अधिकार है ? हमने उनके लिए क्या किया है ? ये तो देखना चाहिए। पहले उनके साथ अपना कनेक्शन (सम्बन्ध) जोड़ लीजिए।

अब सहजयोग माने परमात्मा से सम्बन्ध जोड़ना। सहज इस शब्द में 'सह' माने अपने साथ, 'ज' माने जन्मा हुआ। जन्म से ही आपमें योग (सम्बन्ध जोड़ना), योग सिद्धि का जो अधिकार है, वह माने 'सहजयोग' है। आपमें परमात्मा ने कुण्डलिनी नाम की एक शक्ति रखी है वह आपमें स्थित है। आप विश्वास कीजिए या न कीजिए। क्योंकि ऊपरी (बाह्य) आंखों (दृष्टि) वाले लोगों को कुछ कहना कठिन है। विशेषकर अपने यहां के साहित्यिक और बुद्धिजीवी लोग विचारों पर चलते हैं। और विचार कहां तक जाएंगे, इसका कोई ठिकाना नहीं है। किसी विचार का किसी से मेल नहीं है। इसलिए इतने झगड़े हैं। तो इन विचारों के परे जो शक्ति है, उसके बारे में अपने देश में परम्परागत अनादिकाल से बताया गया है। उस तरफ कुछ ध्यान देना जरूरी है। परन्तु इन विचारवान लोगों में इतना अहंकार है कि वे उधर ध्यान देने के लिए तैयार नहीं। हो सकता है शायद इसमें उनके पेट का सवाल है। परन्तु सहजयोग में आने के बाद पेट के लिए आप आशीर्वादित होते हैं। परमात्मा से सम्बन्ध घटित होने के बाद आपकी समस्याएं ऐसे हल होती हैं कि आपको आश्चर्य होगा। "ऐसा हमने क्या किया है ? इतना हमें परमात्मा ने कैसे दे दिया ? इतनी सही व्यवस्था कैसे हो गयी ?" ऐसा सवाल आप अपने आपसे पूछ कर चकित रह जाते हैं। ज्ञानदेव की 'ज्ञानेश्वरी' का आखरी पसायदान (दोहा) आपने सुना होगा। उन्होंने जो वर्णन किया है वह आज की स्थिति है। ये सब अब घटित होने वाला है। जिस चीज की जो इच्छा करेगा वह (परमेश्वरी आनन्द) उसे प्राप्त होगी। परन्तु वह करने के पहले आप केवल कुण्डलिनी का जागरण कर लीजिए। उसके बिना मैं आपको कोई वचन नहीं दे सकती। और न मिनिस्टर (मन्त्री) लोगों की तरह आश्वासन देती हूँ। जो बात है वह मैं अपनी बोली में अपने ही ढंग से कह रही हूँ। कोई साहित्यिक भाषा में नहीं बोल रही हूं। जैसे कोई मां अपने बच्चे को घरेलू बातें समझाती है उसी तरह मैं आपको समझा रही हूँ। आपमें जो संपदा है वह प्राप्त कीजिए। आप कहते हैं हम प्रपंच में बंध गए हैं। 'बंध गए हैं' माने क्या ? तो फालतू बातों का आपको महत्व लगने लगा। मुझे नौकरी मिलनी चाहिए, वो क्यों नहीं मिल रही है, क्योंकि बेकारी ज्यादा है ? माने बेकार ज्यादा हैं इसलिए। बेकारी क्यों ज्यादा है ? बेकारों की संख्या बढ़ रही है। वो बढ़ती ही जाएगी। इन कारणों के परे कैसे जाना है ? उसका

इलाज है कि वह जो शक्ति हमारे चारों तरफ है उसका आह्वान करना होगा। अपने में वह शक्ति मूलाधार चक्र में रहती है। मूलाधार में ये जो शक्ति है वह प्रपंच में कैसे कार्यान्वित है यह आप देखिए। अपना ध्यान उस (शक्ति की) तरफ होना चाहिए। और सर्वप्रथम ये विचार होना चाहिए कि मूलाधार में जो कुण्डलिनी शक्ति है वह श्री गणेश की कृपा से वहां बैठी है। अब इस महाराष्ट्र को बहुत बड़ा वरदान है कहना चाहिए। यहां जो अष्टविनायक हैं वह आपके लिए परमात्मा का बहुत बड़ा उपकार हैं। इसी कारण महाराष्ट्र में मैं सहजयोग स्थापित कर सकी हूँ। क्योंकि श्री गणेश का जो प्रभाव है उसी का आप पर आवरण है। उसी आवरण के कारण सचमुच मेरी बहुत मदद हुई है। ये श्रीगणेश आपके मूलाधार में विराजमान हैं। अब कोई डॉक्टर है तो वह अपने घर में श्रीगणेश का फोटो रखेगा। मन्दिर भी बनाएगा। वहां जाकर नमस्कार करेगा। परन्तु उस श्रीगणेश का और डॉक्टरी का क्या सम्बन्ध है ये उसकी समझ में नहीं आएगा और उसे वह स्वीकार भी नहीं करेगा। परन्तु उस श्रागणेश के बिना डॉक्टरी भी बेकार है। अब ये जो श्रीगणेश शक्ति आपमें है उसी के कारण आपके बच्चे पैदा होते हैं। अब जरा सोचिए, एक माता-पिता जिस तरह उनके चेहरे हैं उसी तरह का बच्चा पैदा होता है। हजारों, करोड़ों लोग इस देश में हैं, दूसरे देशों में हैं। परन्तु हर एक का बच्चा या तो उसके माता-पिता को तरह होता है, नहीं तो दादा-दादी या उस परिवार के किसी व्यक्ति के चेहरे पर होता है। तो इसका जो नियमन है वह कौन करता है ? वह श्रीगणेश करते हैं।

आपका ये कर्तव्य है कि अपने घर में जो गणेश (बच्चे) हैं उनमें जो बाल्यवत् अबोधिता है उसे स्वीकार करें। वह अबोधिता अपने में आनी चाहिए। घर में छोटे बच्चे होते हैं। छोटे बच्चे कितने अबोध होते हैं। उनके सामने हम गाली-गलौच करते हैं, बुरे शब्द बोलते हैं। ऐसे वातावरण में हम उनको पालते हैं, जहां सब अमंगल है। उन्हें जो इच्छा करने देते हैं या कहिए उनकी तरफ कोई ध्यान नहीं देते। यही (बच्चे) तो आपके घर के गणेश हैं। उनके संवर्धन में, पालन-पोषण में आपका ध्यान नहीं है। आजकल तो इंग्लैण्ड में ८० वर्ष की आयु की औरतें भी शादी करती हैं। तो अब क्या कहें कुछ समझ में नहीं आता। वहां की गंद यहां मत लाओ। वहां की गंद वहीं रहने दीजिए। ते अति शहाणे त्यांचे बैल रिकामे, (जो ज्यादा सयाने हैं उनकी खोपड़ी खाली है।) तो श्रीगणेश की अप्रसन्नता हम पर न हो उसका निश्चय करना होगा।

श्रीगणेश हममें बैठकर हमारे बच्चों का पालन करते हैं। प्रथम जनन और उसके बाद पालन। और वह जो भोला गणेश (बच्चा) है वह घर के सभी लोगों को आनन्द देता है। किसी घर में बच्चा पैदा होते ही कितनी खुशियां छा जाती हैं। उस बच्चे से कितनी आनन्द की लहरें घर में फैलती हैं। परन्तु जिस घर में बच्चा नहीं होता वहाँ कैसा खालीपन सा महसूस होता है। ऐसा लगता है उस घर में जाएं नहीं। क्योंकि वहाँ बच्चों की गुनगुनाहट नहीं, हंसना नहीं, खिलखिलाना नहीं, वह मस्ती नहीं। ऐसे घर में कोई माधुर्य नहीं। परन्तु आजकल जमाना कुछ दूसरा ही है। जिन देशों को अमीर affluent कहते हैं उन देशों में बच्चे पैदा ही नहीं होते। उनकी आबादी घटती जा रही है। और हमारे भारत देश की आबादी बढ़ती जा रही है। इसलिए लोग कहते हैं यह बहुत बुरा है। आपके देश की आबादी इतनी नहीं बढ़नी चाहिए। मान लिया, परन्तु कहना ये है कि जो बच्चे आज जन्म ले रहे हैं उनमें भी अक्ल होती है। वे क्यों उन देशों में जन्म लेने लगे ? वे कहेंगे वहां रोज पति-पत्नी तलाक लेते हैं और बच्चों को जान से मार डालते हैं। वही हमारे साथ होगा। क्योंकि यहां

(भारत में) मां-बाप को बच्चों के प्रति जो आस्था, जो प्रेम, जो सहज-बुद्धि है वह इन लोगों में (अमीर देशों में) बिल्कुल नहीं है। आपको सुनकर आश्चर्य होगा कि लंदन शहर में मां-बाप एक हफ्ते में दो बच्चों को मार देते हैं। जितना सुनोगे उतना कम है। मुझे तो रोज ही धक्का सा लगता है। और उन्हें उसका कुछ भी असर नहीं है। क्योंकि अहंकार में इतने डूबे हैं कि इसमें कुछ अनुचित है ये महसूस ही नहीं करते। वहां जाकर मालूम हुआ हिन्दुस्तानी मनुष्य कितना अच्छा है। यहां (भारत) के टेलीफोन ठीक नहीं हैं। माईक ठीक नहीं हैं। रेलगाड़ियां ठीक नहीं हैं। सब कुछ मान लिया। पर लोग तो ठीक हैं। उस अच्छाई में जो गहन से गहन है, वह है गणेश तत्व। और जिस घर में गणेश तत्व ठीक नहीं है वहां सब कुछ गलत होता है। जहाँ बच्चे बिगड़ रहे हैं उसका दोष मैं समाज से ज्यादा मां-बाप को देती हूँ। आजकल माँ भी नौकरी करती हैं। बाप तो करते ही हैं। तब भी जितना समय आप अपने बच्चों के साथ काटते हैं, वह कितना गहन है ये देखना जरूरी है। अब सहजयोग में आने पर क्या होता है ये देखना जरूरी है। मतलब सहजयोग का सम्बन्ध आपके बच्चों के साथ किस तरह है ये देखना जरूरी है। सहजयोग में आपकी गणेश शक्ति जो जागृत होती है वह कुण्डलिनी शक्ति के कारण है। तब प्रथम मनुष्य में सुबुद्धि आती है। हम उसे विनायक (गणेश) कहते हैं। वही सबको सुबुद्धि देने वाला है। मैंने ऐसे बच्चे देखे हैं, जिन्हें लोग मेरे पास लेकर आते हैं, कहते हैं, बच्चा क्लास में एकदम ('शून्य') है, खाली मस्ती करता है, मास्टरजी से उल्टा-सीधा बोलता है। मैंने उससे पूछा, तुम ऐसे क्यों करते हो ? उसने कहा, मुझे कुछ नहीं आता और मास्टरजी भी मुझे डाँटते रहते हैं। फिर मैं क्या करूं ? वही बच्चा फर्स्ट क्लास फर्स्ट (प्रथम श्रेणी, प्रथम स्थान) में पास हुआ है। ये कैसे हुआ है ? वह गणेश अपने में जागृत होते ही वह शक्ति आपमें बहने लगती है और मनुष्य में एक नये तरह का 'आयाम' शुरू हो जाता है। उस आयाम को हम सामूहिक चेतना कहते हैं। उस नयी चेतना में जो चीजें पहले मनुष्य को साधारणतया दिखाई नहीं देतीं, अनुभव नहीं होतीं, वे सहज में ही होने लगती हैं।

ये नया आयाम या कहिए ये जो एक नयी चेतना-शक्ति अपने में आने लगती है उस शक्ति से मनुष्य सच्चा समर्थ हो जाता है और उस समर्थता से एक चमत्कार घटित होता है। जो बच्चे बेकार हैं, जो किसी काम के लायक नहीं हैं, माने जो शराब वगैरा पीते हैं—आजकल आपको मालूम है ड्रग वगैरा चलता है—हमने तो कभी चरस नाम की चीज ही नहीं देखी थी। अब मालूम होता है कि आजकल स्कूलों में चरस बिकती है। ये सब मूर्खता, सुबुद्धि न होने के कारण होती है। वह सुबुद्धि जागृत होते ही जो लोग इंग्लैण्ड, अमेरिका में चरस लेते हैं वे यह सब छोड़कर अच्छे नागरिक बन गए हैं। ये सहजयोग की शक्ति है। बच्चों में शिष्टाचार आता है। मैं देखती हूँ आजकल बच्चों में शिष्टाचार नहीं है क्योंकि माँ-बाप आपस में लड़ते हैं, बच्चों का आदर नहीं करते। उनसे चाहे जैसा व्यवहार करते हैं। जैसी मां-बाप की प्रकृति, वैसी ही बच्चों की बन जाती है और वे वैसे ही असभ्य आचरण करते हैं। सहजयोग में आकर माता-पिता की कुण्डलिनी अगर जागृत हो गयी और बच्चों की भी हो गयी तो फिर सब एकदम कायदे से व्यवहार करते हैं। पहले आत्म-सम्मान जागृत होता है। उपदेश करने से आत्म-सम्मान जागृत नहीं होता। परन्तु सहजयोग में कुण्डलिनी जागृति से मनुष्य में सम्मान आता है।

अपने देश में जो मनुष्य सत्ताधीश है उसी का सम्मान करने की रूढ़ी चली आ रही है। परन्तु सच्ची सत्ता श्रीगणेश की है। उनकी सत्ता जिनके पास हो उन्हीं के चरणों में झुकना चाहिए। बाकी सब ऐरे-गैरे नत्थू-खैरे आज आएंगे कल चले जाएंगे।

उनका कोई मतलब नहीं, बेकार हैं वे लोग। जिन्होंने गणेश को अपने आप में जागृत किया है उनके सामने झुकना चाहिए।

गणेश शक्ति जागृत होते ही आदमी में बहुत अन्तर आ जाता है। जैसे कि आजकल पुरुषों की नजर इधर-उधर दौड़ती रहती है, चंचल रहती है, आज्ञाचक्र पकड़ता है। हरदम पागलों की तरह इधर-उधर देखते रहना, जिसे कहते हैं तमाशगीर। आजकल तमाशगीरों की बड़ी भारी संख्या है। महाराष्ट्र में भी शुरू हुआ है। हम जब छोटे थे, स्कूल, कॉलेजों में पढ़ते थे तब हमने ऐसे तमाशगीर नहीं देखे थे। परन्तु अब ये नये लोग निकले हैं। ये लोग हरदम अपनी आँखें इधर से उधर दौड़ाते रहते हैं। उससे बहुत शक्ति नष्ट होती है और उसमें किसी भी प्रकार का आनन्द नहीं है। Joyless Pursuit (नीरस क्रिया) कहना चाहिए। उसीमें अपना सारा चित्त लगाकर अपनी आँखें इधर-उधर घुमाते रहते हैं। हरदम इधर-उधर देखना, जैसे रास्ते के विज्ञापन देखना। गलती से कोई विज्ञापन देखना छूट गया तो उन्हें लगेगा जैसे अपना कुछ महत्वपूर्ण काम चूक गया। फिर से आँख घुमाकर वह विज्ञापन पढ़ेंगे। हर-एक चीज देखना जरूरी है। ये जो आंखों की बीमारी है यह एकदम नष्ट होकर मनुष्य सहजयोग में एकाग्र होता है। तब इसमें एकाग्र दृष्टि आती है। ऐसी एकाग्र दृष्टि व गणेश शक्ति अगर जागृत हो जाती है, उसे "कटाक्ष निरीक्षण" कहते हैं। आपकी कटाक्ष दृष्टि जहाँ पड़ेगी वहां कुण्डलिनी जागृत हो जायगी। जिसकी तरफ आप देखेंगे उसमें पवित्रता आ जाएगी। इतना पावित्र्य आँखों में आ जाएगा। ये केवल अकेले गणेश का काम है। और ये गणेश आपके घर ही में है। आपने अपने गणेश को पहचाना नहीं। अगर पहचाना होता तो अपनी पवित्रता में स्थित होते। जो पवित्र है वही करना चाहिए। परन्तु आपने अपने गणेश को नहीं पूजा। कोई बात नहीं। अपने घर में बच्चे हैं, उनके गणेश को दखिए। उन्हें पूजनीय बनाइए और अपने गणेश को भी। आप अपनी कुण्डलिनी जागृत करवाइए। परन्तु सहजयोग की विशेषता ये है कि ये सहज में होता है। उसके लिए कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं। कुण्डलिनी जागृत होने पर मनुष्य में सुबुद्धि आती है और उस मनुष्य का सारा व्यक्तित्व एक विशेष प्रकार का हो जाता है। अब यहां पर जो साहित्यिक लोग होंगे वे कहेंगे माताजी कोई भ्रामक (विचित्र) कहानियाँ सुना रही हैं। परन्तु आपको सुनकर आश्चर्य होगा अहमद नगर जिले में सहज-योग के कारण दस हजार लोगों ने शराब छोड़ी है। मैं शराबबंदी हो जाय वगैरा नहीं बोलती हूँ। मैं कुछ नहीं बोलती। आप जैसे भी हो आप आइए। आकर अपना आत्मा रूपी दिया जलाइए। दिया जलने के बाद शरीर में क्या दोष हैं वे आपको दिखाई देंगे। जब दिया नहीं जलेगा तब तक साड़ी में क्या लगा है ये नहीं दिखाई देगा। उसी तरह एक बार दिया जला कि सब कुछ दिखाई देगा। बिल्कुल थोड़ा सा भी जल गया तो भी आपको दिखाई देगा कि अपनी क्या क्या त्रुटियाँ हैं। आप ही अपने गुरू बनिए और अपने आपको अच्छा बनाइए। स्वयं को पवित्र बनाइए। जो लोग पवित्र होते हैं उनके आनन्द की कोई सीमा नहीं। उनके आनन्द का कोई ठिकाना नहीं रहता। किसी ने कहा है "जब मस्त हुए फिर क्या बोलें ?" अब हम मस्ती में आए हैं तो उस मस्ती की हालत में अब हम क्या बोलें ? ऐसी स्थिति हो जाती है। पवित्रता आनन्दमयी है और केवल आनन्दमयी ही नहीं, पूरे व्यक्तित्व को सुगंधमय कर देती है। ऐसा मनुष्य कहीं भी खड़ा होगा तो लोग कहेंगे "हे भाई इसमें कुछ तो भी कुछ विशेष बात है इस मनुष्य में।" जिन्हें विशेष नहीं बनना है उनके लिए सहजयोग नहीं है। जिन्हें विशेष बनना है वे बनेंगे। आप विशेष बनने वाले हो ये सर्वविदित है। वह आपको अर्जन करना है, कमाना है। जिन्हें विशेष बनना है, उन प्रापंचिक लोगों के लिए, घर-गृहस्थी में रहने वाले लोगों के लिए सहजयोग है। जिन्हें

कुछ बनना नहीं, जो समझते हैं हम बिल्कुल ठीक हैं, हमें कुछ नहीं चाहिए माताजी, तो भाई ठीक है, आपको हमारा नमस्कार। आप पधारिए। आप पर हम जबरदस्ती नहीं कर सकते। अगर आपको पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करनी है तो हमें आपकी स्वतन्त्रता की रक्षा करनी है। अगर आपको नर्क में जाना है तो बेशक जाइए, और अगर स्वर्ग में आना है तो आइए। हम आप पर कोई जोर जबरदस्ती नहीं कर सकते।

सर्वप्रथम अपने प्रपंच में सुख का कारण बच्चा होता है। गर्भारम्भ से ही घर में आनन्द शुरू हो जाता है। माता के कष्टों की समाप्ति के पश्चात बच्चे का अत्यन्त उल्लास के बीच जन्म होता है। आजकल मैंने देखा है जो लोग पार हैं उनके जो बच्चे होते हैं, वे जन्म से ही पार होते हैं, चाहे वे लोग कहीं भी रहें। कितने ही बड़े-बड़े आत्मपिंडों को जन्म लेना है। सबको मैं देख रही हूँ। वे कह रहे हैं, "ऐसा कौन है जो हमारी आत्मा को सुचारू रखेगा ?" ऐसे-वैसे लोगों के यहाँ साधु-सन्त नहीं जन्म लेते। ऐसे बड़े-बड़े आत्म-पिंड आज जन्म लेने वाले हैं और उनके लिए ऐसे लोगों की जरूरत है जिनके प्रपंच सचमुच ही प्रकाशित हैं। और ऐसे प्रकाशित प्रपंच निर्माण करने के लिए आप सहज-योग अपनाकर अपनी कुण्डलिनी जागृत करवा लीजिए।

वह होने के बाद दूसरे चक्र से जिसे हम 'स्वाधिष्ठान' चक्र कहते हैं उससे प्रपंच में बहुत से लाभ होते हैं। स्वाधिष्ठान चक्र का पहला काम है, आपकी गुरु-शक्ति को प्रबल बनाना। बहुत से घरों में मैंने देखा है, पिता की कोई इज्जत नहीं, माँ की कोई इज्जत नहीं। छोटे-छोटे १५, १६ साल के बच्चे ही सब कुछ हैं। आजकल बाजार में मैं देखती हूँ हमारे जैसे वयस्क लोगों के लिए साड़ी खरीदना एक समस्या है। सभी साड़ियाँ युवा लड़कियों के लिए ही हैं। बड़े-बूढ़े लोगों के लिए साड़ियां बनाने का आजकल रिवाज ही नहीं रहा। पहले जमाने में बूढ़े लोगों के पास पैसा रहता था, उनके लिए सब-कुछ ठीक-ठाक रहता था। अब बूढ़े लोगों को कोई पूछता नहीं। उनके लिए शादी-ब्याह में एकाध साड़ी खरीदना भी मुश्किल हो गया है। जिस समय ये गुरु-शक्ति आपमें जागृत होती है तब ये जो बुढ़ापन, वृद्धत्व आता है, उसमें तेजस्विता जागृत हो जाती है। अब हम एक बड़े बुजर्ग आदमी को लें। अपने पिता भी कभी-कभी बिल्कुल मूर्खों की तरह बर्ताव करते हैं। माँ महा-मूर्खों की तरह बर्ताव करती है। बाहर से जो लोग आते हैं उनके सामने किस तरह रहना है उसे नहीं मालूम। चिल्लाती रहती है, सारा ध्यान उसका चाभियों पर, नहीं तो जात-पात के लड़ाई-झगड़ों पर रहता है। कोंकणस्थ की शादी कोंकणस्थ से ही होनी चाहिए, देशस्थों की देशस्थों से। ऐसा नहीं हुआ तो सास लड़ती है। ये जो बुड्ढे लोगों की अजीब बातें हैं, ये तब खत्म हो जाती हैं और उसके स्थान पर उस बूढ़ेपन में एक तरह की "तेजस्विता" आ जाती है। वह व्यक्ति अपने सम्मान के साथ खड़ा रहता है। आपको लगेगा "अरे बाप रे! हमारे पिताजी ये क्या हो गए ? पहले जमाने के जो दादोजी कोंडदेव (शिवाजी के जमाने के लोग) वगैरा लोग थे, क्या वही यहाँ खड़े हो गए ?" और तुरन्त उनके सामने हम विनम्र हो जाते हैं।

तो इस युवा पीढ़ी में जो खलबली मची हुई है। बात-बात पर तलाक, पत्नी के साथ लड़ाई, माँ-बाप से नहीं बनती, घर में रह नहीं सकते, घर से बाहर भाग जाना, छोटी-छोटी बातों पर लड़ाई-झगड़े, ये सब हो रहा है। काम-धंधा नहीं, पैसे नहीं, सभी बुरी आदतें, सब तरफ से आजकल की युवा पीढ़ी एक बड़े संक्रमण-काल की तरफ बढ़ रही है। उनकी पृष्ठभूमि (background) बहुत महान है। पर मैं कहती हूँ महाराष्ट्र की पृष्ठभूमि तो बहुत ही महान है। पर वह सब भूलकर भी पढ़ेंगे नहीं, सुनेंगे नहीं। अब संगीत का अपने

महाराष्ट्र में कितना ज्ञान है? साधु-सन्तों का कितना साहित्य है अपनी भाषा में। पर वह सब किताबें कौन पढ़ता है? गंदी किताबें सड़क पर खरीद कर पढ़ना। कुछ अत्यन्त नकली, superficial (जो गहराई में नहीं जाते, बस ऊपर ऊपर उतराते रहते हैं) इस तरह की युवा पीढ़ी बनती जा रही है। इस युवा पीढ़ी को अगर इसी तरह रखा तो ये इसी हवा में खो जाएगी। किसी काम की नहीं रहेगी। मुझसे पूछिए आप, मैं अमेरिका गई थी तो ६५% पुरुष बेकार हैं। वहां के जो लोग हैं उन्हें एक डर है। वहां 'एडस' नाम की कोई बीमारी है। उससे सभी युवा लोग मर रहे हैं और उन्हें समझ में नहीं आ रहा कि इससे कैसे छुटकारा मिले? उसका कारण है, 'ये करने में क्या हर्ज है? इसमें क्या बुरा है? हो गए होंगे श्री रामदास स्वामी, हमें उनसे क्या मतलब? वह सब बातें रखिए अपने पास। हम अब मॉडर्न बन रहे हैं।' बड़े आए मॉडर्न बनने वाले! वे (अमेरिकन) मॉडर्न कहां गए हैं। वह देखिए एक बार उस देशों में जाकर। वहां के मॉडर्न लोगों की क्या स्थिति है ये जरा जाकर देखिए। यहां के लेखकगण यहीं बैठकर वहां के वर्णन लिखते रहते हैं। वहां जाकर देखिए। वहां के वयस्क लोग रात-दिन एक ही बात सोचते हैं, हम किस तरह आत्म-हत्या करें? एक ही विचार है उनका, आत्महत्या। यही एक रास्ता है उनके पास। तो हवा में खत्म होने वाले जो ये लोग हैं उनकी तरह आपको मॉडर्न होना है तो आपको हमारा नमस्कार! परन्तु आप को अपनी शक्ति में खड़े रहना है और कोई विशेष बनना है, तो आप जो चले जा रहे हैं सो रुकना पड़ेगा। जरा शांत होकर सोचिए ये (विदेशी) जो सारे दौड़ रहे हैं, जो Rat race (अंधाधुंध दौड़) चल रही है उसमें मैं भी क्या भाग रहा हूं? एक मिनट शान्त होकर सोचना चाहिए हमारी भारतीय विरासत क्या है? सम्पत्ति के बटवारे में यदि एक कतरन (छोटा टुकड़ा) कम-ज्यादा मिली तो कोर्ट में लड़ने जाते हैं! परन्तु अपने इस देश को बड़ी परम्परा है। उस तरफ किसी का ध्यान नहीं। वह खत्म होने जा रही है। उसका हमने कितना लाभ उठाया है? इसका ज्ञान सहजयोग में आने पर वयस्क लोगों को होता है। क्योंकि तब उन्हें मालूम होता है कि हम पहले जो थे उससे कितने ऊँचे उठ गए हैं। मेरे बचपन में मेरे पिताजी ने मुझसे कहा था सर्वप्रथम इस युवा वर्ग की जागृति होनी चाहिए। दसवीं मंजिल (चेतना के स्तर) पर बैठे साधु-सन्त नहीं समझ पाते कि साधारण लोगों को, जो अभी पहली मंजिल पर भी नहीं पहुँचे, उनकी चेतना की क्या अवस्था है। ये (साधारण लोग) ताल-मजीरे अवश्य बजाते हैं, किन्तु उन गीतों व भजनों के पीछे क्या भाव है यह वे नहीं समझते। जब वे पहली मंजिल (आत्म-साक्षात्कार) पर पहुँचेंगे तब उन्हें पता चलेगा कि उससे ऊपर और भी मंजिलें हैं।

तो इस सर्वसाधारण मानवी चेतना के परे एक बहुत बड़ी चेतना है। उसे 'ऋतंभरा शक्ति' कहते हैं। वह आपको सहज में प्राप्त होती है। वह प्राप्त होने के बाद आपको अपने जीवन का दर्शन होगा। हम क्या हैं, कितने महान हैं और हम ये जो अपने जीवन के साथ खिलवाड़ कर रहे हैं, ये क्या हमें शोभा देता है? कितनी आपके पास संपदा है आपने अपनी क्या इज्जत रखी? आपको अपने बारे में कुछ पता नहीं है। ये आप समझने की कोशिश कीजिए और सहजयोग में अपनी जागृति कराइए। इसी तरह आजकल की युवा पीढ़ी है। ये भी परमात्मा के साम्राज्य में सहज में आ सकती है। इस युवा-पीढ़ी को पार कराना बहुत आसान काम है। सारे भोलेपन में गलत काम करते हैं। इनका सब भोलापन ही है। एक लड़का सिगरेट पीता है तो मैं भी पिऊं, बस! किसी ने कुछ विशेष तरह के कपड़े पहने तो मैं भी पहनूंगा, इतना ही! सब कुछ भोलापन! परन्तु कभी-कभी इस भोलेपन से ही अनर्थ हो सकता है। परन्तु यही युवा पीढ़ी आज

कहां से कहां पहुँच सकती है। आज अपने देश में किस बात की कमी है ? कोई कहेगा खाने की है। परन्तु मुझे तो ऐसा कुछ दिखाई नहीं देता। मुझे लगता है हम ज्यादा ही खाते हैं और दूसरों को भी देते हैं। मैं जब भी यहाँ आती हूँ तो सबको हाथ जोड़कर बोलती रहती हूँ, अब खाना बस करिए मुझे अब नहीं चाहिए। हर-एक मनुष्य वहां कहता है हिन्दुस्तान में खाने की कुछ कमी नहीं दिखाई देती, क्योंकि इतना खिलाते हैं, आग्रह कर करके। लगता है खाना ही न खाएं। तो अपने यहाँ कमी किस बात की है ? लोग भी बहुत से वाद-विवाद चर्चा करने में नंबर एक हैं। वे अगर यहाँ खड़े होंगे तो मुझसे भी जबरदस्त भाषण देंगे, सभी बातों में। बहुत होशियार हैं हम लोग। कुछ ज्यादा ही होशियार ! सब कुछ है हमारे पास, सोना-चांदी, सब कुछ। कमी किस बात की है ? सोचकर देखिए हममें किस बात की कमी है। एक ही कमी है कि हमें ये ज्ञान नहीं कि हम कौन हैं ? मैं कौन हूँ ? इसका अभी तक ज्ञान नहीं है। जिस समय ये घटित होगा तब पूरा शरीर पुलकित हो उठेगा और आपके शरीर से प्रेम अर्थात् चैतन्य की लहरें बहने लगेंगी। केवल ये घटना आप में घटित होनी चाहिए। इसकी कोई गारंटी नहीं दे सकता। होगा तो होगा, नहीं तो नहीं भी। आज नहीं तो कल घटित होगा।

इस प्रपंच में आपकी आर्थिक समस्याएं हैं। महाराष्ट्र में देखो तो "श्री माताजी, गरीबों को आप से क्या लाभ होगा ?" आप क्या हैं, गरीब हैं या अमीर, या मध्यम ? फिर आपको क्या लाभ चाहिए ? आप चाहे मध्यम हो, अमीर हो, रईस हो, चाहे गरीब, किसी को भी संतोष नहीं। रेडियो है तो वी. डी. ओ. चाहिए। वी. डी. ओ. है तो एयरकंडीशनर चाहिए। और उसके बाद जहाज चाहिए। और आगे क्या, वह परमात्मा ही जाने ! Economics (अर्थशास्त्र) का एक सर्व-साधारण नियम है। इच्छाएं सामान्यरूप से कभी भी पूरी नहीं होतीं। आपकी एक इच्छा हुई तो वह पूरी होगी। परन्तु साधारणतया ऐसा होता नहीं। आज एक हुई, कल दूसरी, उसके बाद तीसरी। एक बात स्पष्ट है जो हमने इच्छा की वह शुद्ध इच्छा नहीं थी। अगर वह शुद्ध इच्छा होती तो वह पूरी होने के बाद हमें पूर्ण समाधान होता। परन्तु ऐसा है नहीं। मतलब आपकी इच्छा शुद्ध नहीं थी। अशुद्ध इच्छा में रहे। इसलिए एक के बाद दूसरी, तीसरी, चौथी इस चक्कर में आप घूमते रहे। अब शुद्ध इच्छा साक्षात कुण्डलिनी है। क्योंकि वह परमात्मा की इच्छा है। ये जागृत होते ही जो आप इच्छा करोगे···जो जे वांछिल, तो ते लाहो (जो जिसकी इच्छा है वह उसे प्राप्त होगा।) इतना कि आप कहेंगे अब मुझे कुछ नहीं चाहिए। आपकी जो इच्छाएं हैं वे पूरी होती हैं, परन्तु वे इच्छाएं जड़ वस्तुओं की नहीं होतीं। उनमें एक तरह की प्रगल्भता, उदात्तता होती है। और आपकी जो छोटी-छोटी बातें हैं वह कृष्ण के कथनानुसार "योग क्षेमं वहाम्यहम्" जब आपका योग घटित होगा तो क्षेम होगा ही। परन्तु पहले योग कहा है, "क्षेम योग" नहीं कहा है। "योग क्षेम वहाम्यहम्" पहले योग घटित होना जरूरी है। सुदामा को पहले कृष्ण को जाकर मिलना पड़ा तब उसकी सुदामा नगरी सोने की बनी। आपका कहना है हम यहीं बैठे रहेंगे और हाथ में सब कुछ आ जाय। क्यों ? परमात्मा पर आप इतना अधिकार क्यों जताते हैं। किसलिए ? चार पैसों के फूल लिए और परमात्मा को दे आए। इसलिए ? उलटे इसमें आपकी बड़ी गलती है। बहुत से लोग मैंने देखे हैं जो शिवभक्त हैं। वे 'शिव-शिव' करते रहते हैं और उन्हें हार्ट अटैक होता है। शिव आप के हृदय में बैठे हैं। फिर ऐसा क्यों ? उन्हें हार्ट अटैक क्यों हुआ ? क्योंकि शिव नाराज हो गये। आप किसी मनुष्य को ऐसे बुलाते रहें बार-बार, तो उसे भी लगेगा ये आदमी मुझे क्यों परेशान कर रहा है। कल आप राजीव गांधी के घर जाकर "राजीव, राजीव" ऐसे कहते रहे तो लोग आपको

कैद कर लेंगे। यही हुआ है। और इससे आपको न परमात्मा की प्राप्ति हो रही है और न ही प्रपंच की। ऐसी स्थिति है। इसलिए 'मध्य मार्ग' में आना जरूरी है। और मध्य मार्ग को सुषुम्ना नाड़ी का मार्ग कहते हैं। वहां से जब कुण्डलिनी का जागरण होता है तब मनुष्य बीचों-बीच (मध्य में) आकर समाधानी होता है। बिल्कुल समाधानी बन जाता है।

आजकल संतोषी देवी का व्रत चला है। संतोषी नाम की कोई देवी है ही नहीं। सिनेमा वालों ने यह निकाली तो लगे सब व्रत रखने। जो स्वयं संतोष का स्रोत है उसे क्या कहेंगे वह संतोषी है। और इसी तरह कुछ गलत-सलत बनाते रहते हैं। व्रत रखना, आज खट्टा नहीं खाना, ये करना, वह नहीं करना। कुछ तमाशे करते रहना और फिर परमात्मा को दोष देना, हम इतना परमात्मा की सेवा करते हैं फिर भी हम बीमार हैं। उसके बारे में कुछ दिमाग से सोचना चाहिए।

परमात्मा के जो नियम हैं उनका विज्ञान है। वह पहले आप सीख लीजिए। वह सीखे बगैर गलत-सलत करते हो। फिर कुछ बिगड़ गया तो उसे क्यों दोष देते हो? परमात्मा है या नहीं, यही सिद्ध करने के लिए हम आए हैं। बिलकुल सिद्ध करने के लिए। आपके हाथों से चैतन्य बहेगा। आपके हाथों की उंगलियों पर परमात्मा मिलने वाले हैं। परन्तु उसके लिए आपकी तैयारी है? बुद्धि ज्यादा चलती है। श्री माताजी क्या कह रही हैं? जरा दिमाग ठंडा कीजिए, फिर होगा। आपकी समस्याएं अगर आपकी बुद्धि से हल होतीं तो हमें इतनी मेहनत करने की जरूरत नहीं थी। परन्तु वे आपकी बुद्धि से हल होने वाली नहीं हैं। आपकी राजकीय समस्याएं हल नहीं होने वालीं, न सामाजिक और प्रपंच की तो बिलकुल ही नहीं। राजकीय प्रश्न ये है कि हम capitalist (पूंजीपति) हैं। उसी के लिए लड़ रहे हैं। क्या वे लोग सुखी हैं? स्वतन्त्रता भी संभाली जाती है उनसे? दूसरे कहते हैं हम कम्युनिस्ट (साम्यवादी) हैं। किन्तु सच्चे कपिटलिस्ट (पूंजीपति) हम हैं क्योंकि हमारे पास शक्ति (की पूंजी) है। ये सब ऊपरी बातें हैं। इसमें आप लोग मत उलझिए। आप अपने-आप में (अपने भीतर) परमात्मा का साम्राज्य लाइए और उसके नागरिक बनिए। फिर देखिए आप क्या बनते हैं। उसके लिए प्रपंच छोड़ने की जरूरत नहीं है। पैसे देने की जरूरत नहीं है। इसमें क्या पैसे देने? ये तो जीवन प्रक्रिया है आपमें। किसी पेड़ को आपने पैसे दिए तो क्या वह आपको फूल देता है? उसे क्या मालूम पैसा क्या चीज है? उसी तरह परमात्मा है। उन्हें पैसे वगैरा नहीं मालूम। किसी बाबाजी को ले आते हैं और उसे कहते हैं, ये लो पैसे। गाँव में हमारे विषय में कहा माताजी पैसे नहीं लेतीं। तो कहते हैं अच्छा १० पैसे नहीं तो २५ ले लीजिए। परन्तु पैसे किस चीज के दे रहे हो? ये (आत्म-साक्षात्कार) तो आप ही का है। इसे क्या खुद खरीदोगे? प्रेम के द्वारा सब कुछ काम होता है। वह प्रेम प्राप्त करना होगा, जो आजकल प्रपंच में नहीं है। और जो प्रेम नजर आता है वह गलत तरीके का है। किसी पेड़ को आपने देखा होगा। उसका रस ऊपर आता रहता है और जिस जिस भाग को चाहिए उसे देते देते वह अपनी जगह तक जाता है। वह किसी फूल पर या पत्ते पर नहीं अटकता। अटक गया तो बस वह पत्ता भी खत्म और वह पेड़ भी खत्म और फूल भी खत्म। उसी तरह हम लोगों का है। हमारा प्रेम माने "मेरा बेटा! वह तो दुनिया का नवाब शाह हो गया! मेरी बेटी, मेरा काम", 'मेरा-मेरा' चलता रहता है। वह क्या आपका है? लेकिन ये कह सुनकर नहीं होने वाला। कितना भी कह छोड़िए, 'मेरा-मेरा' नहीं छूटने वाला। उसे छुड़वाने के लिये आप की कुण्डलिनी उठनी चाहिए। वह उठने के बाद और आप पार होने के बाद 'तुम्हारा-तुम्हारा' की शुरूआत होती है। कबीर ने कहा है जब बकरी

जीवित होती है तब बार-बार 'मी-मी' (मैं-मैं) करती है। "मैं मैं मैं" करती है। लेकिन वह मरने के बाद उसकी आँत निकाल कर उसका तार खींचकर धुंदके में बांधी जाती है तो उसमें से आवाज आती है "तूही-तूही-तूही"। उसी तरह मनुष्य का है। एक बार जब आपकी कुण्डलिनी जागृत होती है तब लगता है सब कुछ 'तुम्हारा' है। मनुष्य 'अकर्म' में उतरता है। फिर ये बच्चे, सगे-सोदरे सभी तुम्हारे ! लोगों को आश्चर्य होता है, ये सब कैसे होता है ? इस बम्बई शहर में इतने लोगों की प्रापंचिक स्थिति में सुधार आया है कि आपको आश्चर्य होगा। परन्तु हम उस तरफ देखते ही नहीं। हमें विश्वास ही नहीं है। नहीं करते तो मत करिए। पता नहीं आपका अपने स्वयं पर भी भरोसा है या नहीं, परमात्मा ही जाने ! अब ये व्यर्थ वर्तमान पत्र (समाचार पत्र) वादिता छोड़कर सचमुच की वर्तमान स्थिति में क्या हो रहा है ये देखना चाहिए। श्रीकृष्ण आए, कुछ एक परम्परा लेकर आए और उन्होंने कृषि का कार्य किया। एक बीज बोया। आज वह संपदा आपको इस स्थिति तक लाई है। आप फूलों से फल बनने वाले हो। वह आपको प्राप्त कर लेना चाहिए। अगर इस बार आप चूक गए तो समझ लीजिए हमेशा के लिए चूक गए। आपकी सारी प्रापंचिक समस्याएं खत्म होकर आप परमात्मा के प्रपंच में आते हैं। उनके प्रपंच में आए बगैर आपको सुख नहीं मिलने वाला। सारे दुनिया भर के दुःख परमात्मा के चरणों में आने से खत्म होते हैं, ऐसा कहते हैं। परन्तु इसका मतलब ये नहीं कि आप जाकर विट्ठल (परमात्मा) के चरणों में सर फोड़ लें। श्री विट्ठल को अपने आपमें जागृत करना है। और उसे कैसे जगाना है ? उसके लिए कुछ करने की जरूरत नहीं है। वह साक्षात् आपमें है। केवल कुण्डलिनी का जागरण होने के बाद, जिस तरह दिया जलाया जाता है, उसी तरह आपमें वह जलता है। जिस घर में परमात्मा का दिया जलता रहेगा वहां दुःख दर्द कहाँ ? गरीबी और परेशानियाँ कहाँ ? वहाँ तो सुख का संसार होना चाहिए। और इसीलिए हम गाँव-गाँव सब जगह घूमते हैं। आपको मेरी नम्र विनती है कि ये जो आपमें शक्ति है वह जागृत करवा लीजिए और सारे संसार के प्रपंच का उद्धार कीजिए। मैं आपको हाथ जोड़कर विनती करती हूँ।

अशुद्धि-संशोधन

गत मार्च-अप्रैल १९८५ अंक में पृष्ठ १४ पर मुद्रित परमपूज्यनीय श्री माता जी के "कुण्डलिनी और श्री गणेश पूजा" शीर्षक प्रवचन में पंक्ति संख्या ६-७ में "अष्ट-विनाशक" के स्थान पर "अष्ट-विनायक" पढ़ें।

अशुद्धि के लिये क्षमा-याचना है।

—सम्पादक

Registered with the Registrar of Newspapers under Regn. No. 36999/81

卐 जय श्री माता जी 卐

भजन

मां बिन मेरो कौन सहाई,
मां बिन तेरो कौन सहाई ॥

सिर पर मेरे मौत खड़ी थी,
जीवन नैया जब डूब रही थी।
नव जीवन दान दियो मां ने,
मां ही पार लगाई ॥ मां बिन ॥

घनघोर अंधेरा छाया जब,
पंथ सूझ नहि पाई ।
फूट पड़ी करुणा की किरणें,
मां ही मार्ग दिखाई ॥ मां बिन ॥

झूठे सिद्ध हुये जग के नाते,
अंत समय कोई काम न आते ।
अब छूट गये सब रिश्ते नाते,
मां ने मुझको अपनाई ॥ मां बिन ॥

डाक्टर, वैद्य, विटामिन, इंजेक्शन,
किसी ने न पीर हटाई ।
देवालयों के भी चक्कर काटे,
कहीं न आस दिखाई ॥
पर पाया 'सहज' में अचूक,
मातृप्रेम दवाई ॥ मां बिन ॥

सब दुख दूर हुये, माँ का जब नाम लिया,
आनंद मगन हुआ मन, मातृचरणों का ध्यान किया।
मां के शीतल स्पर्श से,
त्रिविध ताप नसाई ॥ मां बिन ॥

चाह गई चिंता मिटी, कट गये भव पाशा,
मातृप्रेम में मेरी, हो गई पूरी आशा।
मां का प्रेम सहज सुलभ,
मातृप्रेम सुखदाई ॥ मां बिन ॥

सत्य प्रेम क्षमा करुणा,
धीरज धरम ध्यान धारणा ।
मां ही सद्गुरु सबका,
परम ज्ञान सिखलाई ॥ माँ बिन ॥

हे माँ ! तुम हो मेरी मां, हो तुम हम सबकी मां,
मां हो तुम प्रेममयी, हो तुम सब जग की माँ।
हे निर्मला मां ! तेरे दर्शन को,
नयन रहे अकुलाई ॥ माँ बिन ॥

सी० एल० पटेल

Edited & Published by Sh. S. C. Rai, 43, Bunglow Road, Delhi-110007 and
Printed at Ratnadeep Press, Darya Ganj, New Delhi-110002.
One Issue Rs. 7.00, Annual Subscription Rs. 30.00 ; Foreign [By Airmail £ 7 $ 14]